नदी प्यासी थी

पाँच एकाँकी

धर्मवीर भारती

किताब महल इलाहाबाद

1954

नदी प्यासी थी

पाँच एकांकी

डा० धर्मवीर भारती

कि ता ब म ह ल

इ ला हा बा द

प्रथम संस्करण
१९५४

प्रकाशक
किताब महल,
५६ ए, जीरो रोड,
इलाहाबाद।

मुद्रक
अनुपम प्रेस,
१७, जीरो रोड,
इलाहाबाद।

●

प्रस्तुत संकलन में मेरे पाँच एकांकी नाटक संगृहीत हैं; जिनमें से चार रंगमंच के लिये हैं तथा एक रेडियो के लिये। मैंने अपनी ओर से यही प्रयास किया है कि रंगमंच के लिये ये पूर्णतया उपयुक्त सिद्ध हों, फिर भी जहाँ तक नाटकों का सम्बन्ध है नाटककार और निर्देशक मिल कर ही उसका अन्तिम स्वरूप स्थिर कर सकते हैं। यहाँ तक कि रिहर्सल के दौरान में अक्सर अभिनेता कुछ ऐसे संशोधन उपस्थित करते हैं जो नाटक की सफलता के लिये महत्वपूर्ण सिद्ध होते हैं। इस दृष्टि से बड़े से बड़े नाटककार की कृति को 'फाइनल ड्राफ्ट' ही मानना चाहिये जब तक वह रंगमंच पर प्रस्तुत न कर दी जाय!

निर्देशक का दायित्व भी कम नहीं है। अकुशल या अदूरदर्शी निर्देशक अक्सर महत्वपूर्ण नाटकों की सम्भावनाओं को भी पहले से समझ नहीं पाते। चेखव का 'सीगल' एक निर्देशक के हाथ में पड़कर जनता के कोप का भोजन बना किन्तु दूसरे निर्देशक ने उसी पर परिश्रम कर उसे रंगमंच का अत्यन्त सफल नाटक बना दिया। हिन्दी में रंगमंच के अभाव के कारण निर्देशक और लेखक का यह पारस्परिक सहयोग आज सुलभ नहीं है। यह हिन्दी के नाटककार का दुर्भाग्य है।

मेरी कई नाट्यकृतियों को श्री प्रभाकर आचार्य बड़ी सफलता से प्रस्तुत कर चुके हैं। सर्वश्री गोपालदास, उपेन्द्रनाथ अश्क, विजयदेव नारायण साही तथा डा० लक्ष्मीनारायण लाल ने मुझे समय समय पर बड़े महत्वपूर्ण सुझाव दिये हैं। उनके प्रति मैं हृदय से आभारी हूँ।

आशा है ये नाटक पाठकों को रुचिकर सिद्ध होंगे और रंगमंच के विकास में अपना विनम्र योग प्रदान करेंगे।

१९९ अतरसुइया
इलाहाबाद

धर्मवीर भारती

अनुक्रम

पृष्ठ

१ नदी प्यासी थी

३५ नीली झील

५१ आवाज़ का नीलाम

६५ संगमरमर पर एक रात

६६ सृष्टि का आखिरी आदमी

नदी प्यासी थी

पात्र

राजेश वर्मा

शंकरदत्त

डा० कृष्णस्वरूप कक्कड़

पद्मा

शीला

घटना-काल : १९४९ की बरसात

दृश्य १

एक कमरा जो स्पष्टतः किसी लड़की का मालूम पड़ता है क्योंकि स्वच्छ है किन्तु सुरुचिविहीन है। सामान बड़ी तरतीब से लगा है पर उस तरतीब से नहीं जिससे कलाभवन में चित्र लगे रहते हैं, बल्कि वैसे जैसे किसी दूकान के शो-रूम में बिकाऊ चीजें लगी रहती हैं। सामने बहुत बड़ी सी एक खिड़की है जिस पर एक बड़ा सा सादा पर्दा पड़ा है। कमरे भर में केवल एक तस्वीर है, मेज पर। एक २० साल की हँसमुख लड़की की तस्वीर। तस्वीर के बगल में टेस, कामायनी और टेनीसन के मोटे वॉल्यूम रक्खे हैं, बगल में टॅलकम पाउडर का एक ऊँचा सा डब्बा।

स्टेज पर बाँई ओर एक दरवाजा है। कमरे के बीचोबीच चटाई पर बैठा हुआ, चौकी पर आइना रख कर शंकर शेव की तैयारी कर रहा है। ब्रश में पानी लगा कर साबुन के प्याले में घुमा रहा है। बाहर से कोई दरवाजा खटखटाता है।

शंकर — उँह! किसी पल चैन नहीं। अब पता नहीं कौन आ गया मरने! (दरवाजा फिर खटकता है। कोई बाहर से नेम-प्लेट पढ़ता हुआ—"शंकर दत्त !....मकान तो यही मालूम पड़ता है। अरे शंकर!' शंकर जल्दी से ब्रश पानी के गिलास में डाल देता है। आधा उछल कर) अरे! राजेश आया! (बाँई ओर देखकर, पत्नी को पुकारता हुआ) शीला! लो राजेश तो आ गया। (उठ कर दरवाजा खोलता है। राजेश हाथ में

अटैची लटकाये हुए आता है। शंकर उठकर अटैची हाथ में लेता है) ओह डियर! तीन दिन से तुम्हारा इन्तजार हो रहा है। (बाँईं ओर से शीला आती है।)

शीला (नमस्ते करती हुई) रोज एक आदमी का खाना ज्यादा बनाती थी मैं।

शंकर तो इस समय किस ट्रेन से आये हो!

राजेश ट्रेन! वह तो लाइन ही टूट गई है। मैं तो स्टीमर से आया हूँ। डूबते-डूबते बच कर!

शीला इस बाढ़ में आप नदी पार करके आए हैं! सचमुच आप वैसे ही हैं, जैसा ये बताते थे।

राजेश क्यों शंकर, क्या बताते थे भाभी से!

शंकर अरे! ये तुम्हारी भाभी तो तुम्हें देखने को वैसे ही आकुल थीं जैसे बच्चे ऊदबिलाव देखने के लिए आकुल रहते हैं। और नदी से आपको प्रेम भी उतना ही है। भला बताइए, नदी के रास्ते से आए हैं! (शीला से) सुनो। चाय चढ़ा दो जल्दी से। (शीला जाती है) तो आप नदी के रास्ते से आए हैं!

राजेश करता क्या ? दो साल से आने को सोच रहा था। जब से युनिवर्सिटी छूटी तुमसे भेंट ही नहीं हुई।

शंकर मैं तो कनवोकेशन में इसीलिए गया, पर तुम वहाँ भी गायब।

राजेश (गहरी साँस लेकर) क्या करूँ। पता नहीं क्या हो गया मुझे ? इसी दो साल के अरसे में जिन्दगी मुझे कहाँ से कहाँ ले गई। और इस समय भी इतना परेशान होकर भागा हूँ। मन पर जैसे हजारों हथौड़े एक साथ चलते हों। अक्सर तो यहाँ तक सोचा कि मर जाऊँ, फुरसत मिले। पर आग के बिस्तरे पर न इस करवट चैन, न उस करवट।

शंकर क्यों ! आखिर यह तुम्हें हो क्या गया है। न ठहाके, न लतीफे। जाने कहाँ की निराशा लाद ली है। बैठो तो। टहल क्यों रहे हो।

राजेश नहीं। बैठेंगे नहीं। टहलने दो। तुम समझते नहीं शंकर। मुझसे क्षण भर भी बैठा नहीं जाता। लगता है जैसे नस-नस में लाखों तूफान घुट रहे हों और उसके बहने का कोई रास्ता नहीं मिलता। जैसे व्यक्तित्व का रेशा-रेशा बिखर रहा हो।

शंकर लेकिन क्यों ?

राजेश पता नहीं क्यों। पता नहीं क्यों जी रहा हूँ। कोई अर्थ नहीं मेरे जीने का।

शंकर (गहरी साँस लेकर) तुम भी ऐसे हो जाओगे राजेश यह मैं कभी नहीं सोच पाता था। भावुक मैं था। जिन्दगी ने मुझे ठीक कर दिया, और तुम जो अपने मन को कितना बाँध कर रखते थे......

राजेश हाँ दोस्त। लेकिन मन की नदी का बाँध फूट ही गया। और फिर तो इतनी भयानक बाढ़ आई कि जाने कितनी मान्यताएँ टूट गईं, कितने संस्कार उखड़ गए, और धार इतनी तेज थी मित्र, कि पाँव तले की धरती तक बह गई। न पाँव तले रेत, न सर पर आकाश...जाने किस दुनिया में यह खूँखार नदी खींच लाई है और न जाने क्या करने पर तुली है...

सहसा गीत जो कुछ देर से पृष्ठभूमि में दूर से सुन पड़ता था, स्पष्ट हो जाता है, शंकर, राजेश के स्वर उसमें डूब जाते हैं....

हाय बाढ़ी नदिया, जिया लैके माने
दाया न जाने, माया न जाने, जिया लैके माने, जिया लैके माने,
हाय बाढ़ी नदिया।

बाहर से स्वर—भट्ट जी ! नदी भवानी के भीख मिलै ।

शीला (अन्दर से) अच्छा । (मुट्ठी में कुछ लेकर आती है)

राजेश ये क्या है भाभी ?

शंकर चना है । हर घर से ये लोग चने की भीख माँगते हैं ।

राजेश क्यों ?

शीला बकरे को खिलायेंगे । नदी बढ़ी है न । ये सब बकरे को नदी किनारे ले जा कर बलि चढ़ायेंगे और ताजा खून जल पर छिड़केंगे । तभी नदी घटेगी ।

राजेश यह सच है शंकर ।

शंकर हाँ पहले हम लोगों को भी यकीन नहीं था । अब तो कई साल तक अपनी आँख से देख चुके हैं ।

शीला लेकिन कभी-कभी इससे भी जल नहीं घटता । देवी के मन्दिर तक जल चढ़ जाता है, मन्दिर डूबने लगता है, तब कस्बे का कोई आदमी डूब कर आत्महत्या कर लेता है और जल उतर जाता है ।

गीत का स्वर दूर जाते हुए--

हे देवी मैया तोहार हम बालक राखहु हमरा धेयान ।
तोका चढ़उबै नरियर बतासा, चढ़उबै पाठा जवान !....

राजेश सच !

शीला और क्या । त्योरस्साल एक पागल डूब गया था । पारसाल एक औरत ने खुदकुशी कर ली । उसकी तो लाश ही लेकर नदी पीछे सिमट गई । (क्षण भर सन्नाटा) चाय वाय यहीं पियेंगे । ?

शंकर नहीं अन्दर मेज लगा दो । (शीला जाती है) (सन्नाटा ।

कभी-कभी गीत हवा में बह आता है) राजेश ! क्या सोच रहे हो ।

राजेश कुछ नहीं । बलि का बकरा ! सोच रहा हूँ जिन्दगी कितनी खूँखार है । हर जगह एक सी है शंकर । कहीं चैन नहीं लेने देती । वहाँ से भाग कर यहाँ आया था कि कुछ चैन मिलेगी । ये लोग हैं । कितनी खुशी से मासूम जानवर को जिबह करने ले जा रहे हैं । हर जगह यही होता है । गाते-बजाते हुये जिन्दगी अपने शिकार को ले जाती है, उसका खून लहरों पर छिड़कने के लिये । एक शिकार मैं हूँ । लेकिन मैंने सोचा था मरूँगा नहीं, यहाँ आकर मन को ताजा करूँगा (दाँत पीस कर) लेकिन नहीं जिन्दगी का शिकंजा तो हर जगह खून का प्यासा है । (गीत फिर सुन पड़ता है ।) देखो । जिन्दगी बार-बार बुलाती है । यह खूनी पुकार यहाँ भी पीछा नहीं छोड़ती । मैं मरना नहीं चाहता शंकर (अस्फुट चीख से) मगर इस आवाज से पीछा छुड़ाओ ।

शंकर पागल हो गये हो राजेश । लो मैं खिड़की बन्द किये देता हूँ । अब आवाज नहीं आयेगी । आखिर कुछ बताओगे तुम्हें हुआ क्या है ?

राजेश बताएँगे मित्र । कुछ दिन चुपचाप आराम करने दो ।

शंकर खूब आराम करो । किताबें पढ़ो । पूरी आलमारी भरी है ।

राजेश हाँ किताबें तो हैं (मेज पर से किताबें उठाता हुआ) टेनीसन, टैस आ' डरबरविले, कामायनी । अच्छा टैलकम पाउडर भी इसी के साथ ! (चित्र उठाता है, देख कर उल्टा रख देता है) ये तुम्हारी किताबें हैं ?

शंकर नहीं ! पद्मा की । मेरी छोटी साली है । उसी की यह फोटो भी

है। आजकल शीला के पास आई हुई हैं। शीला! पद्मा कह गई है?

शीला (अन्दर से) वहीं गई है, डक्टर साहब के यहाँ।

शंकर मेरे दोस्त हैं डा० कृष्णस्वरूप सारस्वत। उनके यहाँ पद्मा भी चली जाती है। करे क्या दिन भर पड़ी-पड़ी? अब तुम आ गये हो। तुम्हीं से मगज़-पच्ची किया करेगी।

शीला चलिये चाय तैयार है। लेकिन पद्मा अभी तक नहीं आई, पता नहीं कब तक आएगी।

शंकर अब आ ही रही होगी। मै तो कहता हूँ कर दो दोनों की शादी, कुछ हम लोगों को भी पद्मा की बाढ़ से रिलीफ मिले।

शीला चलो। तुम तो मजाक करते हो। मुझे तो दोनों की जोड़ी बड़ी अच्छी लगती है। मैंने तो कल चाचा जी को लिख भी दिया है। चलिए अन्दर चाय ठंढी हो रही है।

सब अन्दर जाते हैं। क्षण भर स्टेज खाली रहता है। फिर बाँई ओर से डा० कृष्णा और पद्मा आते हैं। डा० कृष्णा पेंट और कमीज पहने हैं। पद्मा लापरवाही से उल्टा-पल्टा डाले है। देह पर तरुणाई, आँखों में बचपन, बातों में मिसरी, चाल में अल्हड़पन।

पास से कुर्सी खींचकर पलंग के पास डाल देती है और बन्द खिड़की खोल देती है। फिर डाक्टर का कन्धा पकड़कर कुर्सी पर बिठाल देती है।

पद्मा लो बैठो। आज दीदी और जीजा गये हैं स्टेशन, अपने एक दोस्त को रिसीव करने। सुना है कि बड़े लेखक हैं।

कृष्णा लेकिन मुझे देर हो रही है। आज बाढ़-रिलीफ़ कमेटी की मीटिंग है। मैं उसका सेक्रेटरी हूँ न।

पद्मा तो क्या करते हो तुम लोग?

कृष्णा बाढ़-पीड़ितों की सहायता। जो लोग बेघरबार हो गये हैं उनकी मदद। जो बाढ़ में फँस गये हैं उन्हें निकालना।

पद्मा अहा! हा! तुम तो खूब निकालते होगे। जरा से पानी में तो उतरा नहीं जाता, तुम किसी को बाढ़ में से क्या निकालोगे!

कृष्णा मैं तैरना जानता हूँ पद्मा! तुम्हें यकीन नहीं। आजकल भी भरी नदी में कूद जाऊँ तो डूब नहीं सकता।

पद्मा और अगर कोई ऐसी धार में उलझा हो कि डूबकर ही उसे बचा सकते हो तो? तो क्या करोगे?

कृष्णा डूब ही जाऊँगा तो बचाऊँगा कैसे? तुम तो बच्चों की सी बातें करती हो।

पद्मा यही तो तुम नहीं समझते डाक्टर साहब! कैसे बताएँ तुम्हें कि बिना डूबे तुम बचा ही नहीं सकते?

कृष्णा किसे?

पद्मा किसी को भी! मसलन मुझे......

कृष्णा (हँस पड़ता है। पद्मा के आँचल का छोर अपनी अँगुली में लपेटते हुए) तुमने इतनी बात करना कहाँ से सीखा है? डाक्टरी पढ़ने में बड़ा नुकसान रहता है। मुझे भी लिटरेचर पढ़ा दो तो कम से कम तुमसे बात तो कर सकूँ। तुम कितनी कुशल हो बात करने में।

पद्मा (लजा जाती है) धत्!—अरे यह मेरी फोटो किसने उल्टी रख दी है। (उठकर ठीक करती है) और यह अटैची किसकी पड़ी है? (नाम पढ़ती है) राजेश वर्मा! अच्छा आ गये ये लोग।

कृष्णा कौन लोग? क्या शंकर आ गये? अच्छा तो उनसे भी चन्दा ले लूँ रिलीफ का, और चलूँ फिर।

पद्मा अरे बैठो भी। हमारे पास एक मिनट भी बैठते भारी लगता है। हमसे चन्दा नहीं माँगा तुमने।

कृष्णा तुमसे मदद माँगूँगा, चन्दा नहीं। मेरे साथ चलो। तमाम औरतें बेघरबार मदद के लिए पड़ी हैं।

पद्मा न बाबा। मुझे उनकी हालत देखकर बड़ी रुलाई आती है। अभी उस दिन बाढ़ देखने गई, रोते-रोते आँख सूज गई। हमारी आँखें बड़ी कमजोर हो गई हैं कृष्णा! एक चश्मा दिला दो ना।

कृष्णा (अनमना सा) अच्छा।

पद्मा और हाँ, तुम्हें एक बात बताऊँ (कृष्णा घड़ी देखता है) अरे बैठो भी—(कान के पास मुँह लाकर धीमे से) कल जीजी ने चाचा के पास तुम्हारे बारे में चिट्ठी लिखी है। और तो सब ठीक है लेकिन हम लोग सारस्वत हैं और तुम लोग कक्कड़...

कृष्णा (क्षण भर पद्मा की ओर देखता है—फिर हाथ होठों से लगा कर) हम लोग कितने सुखी होंगे पद्मा। यह ठीक है कि मैं तुम्हारी तरह भावुक नहीं, इन्टलेक्चुअल नहीं, लेकिन हम लोग एक दूसरे की कमी पूरी करेंगे।

पद्मा (बहुत मुलायम स्वरों में) हाँ कृष्णा, मैं कविताओं में डूबी रहती हूँ, मगर कवियों से, लेखकों से, मुझे डर लगता है। एक-तिहाई तो इनमें से भिखारी होते हैं, एक-तिहाई पागल और एक-तिहाई......

कृष्णा सखी सम्प्रदाय के। (दोनों हँसते हैं) नहीं एक बात तो है...कभी-कभी कविताओं के मीनिंग मुझे अच्छे लगते हैं। साल भर पहले मैंने भी सोचा था कि कविता बनाऊँ, फिर सोचा उससे मेरे पेशे में नुकसान पहुँचेगा और उसके बाद मिल

गई तुम—बजातखुद कविता (पद्मा का आँचल अँगुलियों पर लपेटने लगता है)

पद्मा (जल्दी से आँचल खींचकर) छोड़ो जीजा जी आ रहे हैं।

शंकर और राजेश बाहर से दोनों बहस करते हुए आते हैं।

राजेश और इसलिये कभी-कभी लगता है कि आदमी को पत्थर होना चाहिए, फौलाद की राक्षसी मशीन होनी चाहिये जो अपने बाहु-चक्रों में सभी को कुचल दे। उसके बिना आदमी जिन्दा नहीं रह सकता। कभी-कभी मन में एक भयंकर खूनी प्यास जागती है जिन्दगी से बदला लेने की, मगर दोस्त! प्यार ने यह भी साहस तोड़ दिया है। जहाँ ख्याल आता है कि इस चक्र में वह भी पिस जायगी जिसे मैंने ईश्वर से बढ़कर माना है, जो आज मुझसे दूर हो गई है तो क्या हुआ, तभी ऐसा लगने लगता है कि मुझमें हिलने तक की ताकत नहीं। मेरा सब कुछ छिन गया (पद्मा और कृष्णा एक दूसरे की ओर देखते हैं......) अब मेरे लिए जिन्दगी का क्या अर्थ है। मैं किसके लिए जिन्दा रहूँ, क्यों जिन्दा रहूँ? फिर सोचता हूँ क्यों मरूँ? जिन्दगी ने फूल बनकर न रहने दिया तो काँटा बनकर रहूँ .. लेकिन रहूँ जरूर! (पद्मा और कृष्णा को देखकर चुप हो जाता है)

शंकर आओ तुम्हारा परिचय करा दें—ये हैं राजेश। तुम दोनों इनके बारे में सुन चुके हो। ये हैं पद्मा, ये हैं डा० कृष्ण स्वरूप कक्कड़—(झुककर धीमे से) पद्मा के भावी पति, और कल से यही तुम्हारा इलाज करेंगे। कृष्णा इन्हें कुछ-कुछ हार्ट-ट्रबुल है। और अब महीने भर रह कर इन्हें स्वास्थ्य सुधारना है यहाँ।

कृष्णा बड़ी खुशी हुई आपसे मिल कर।

राजेश — मैं ऐसा आदमी नही जिससे मिलकर किसी को खुशी हो डाक्टर।

शंकर — नही ! वह व्यापार की दृष्टि से कह रहे थे। उन्हें एक मरीज मिला, क्यों !

सब हँस पड़ते हैं, शीला हाथ में स्वेटर और सलाई लिये आती है।

शीला — अरे भई, इतना मत हँसो। अहा कृष्णा हैं !

कृष्णा — भाभी तुमसे कुछ वसूलने आया हूँ।

शीला — देखो, अभी घबराए क्यों जाते हो डाक्टर साहब। हमने नुस्खा लिखा है। दवा तैयार हो जाय।

पद्मा शरमा जाती है। कृष्णा भी झेंप जाता है, लेकिन चन्दे की कापी निकालता है।

कृष्णा — लिखो।

शंकर — यह क्या है भाई, कुछ हमें भी मालूम होगा ?

कृष्णा — बाढ़-रिलीफ-कमेटी का चन्दा। (कापी राजेश की ओर बढ़ा कर) कुछ आप !

राजेश — (कापी हाथ में लेकर और लाइनें लिखकर हस्ताक्षर कर देता है) देखो शंकर मैंने क्या लिखा है—"जब आदमी के सामने जिन्दगी की दिशाएँ धुंधली पड़ जाएँ, जब वह अपनी जिन्दगी के सही-सही अर्थ न खोज सके तो उसका जिन्दा रहना उसका अहंकार और कायरता है। उसे आत्महत्या कर लेनी चाहिए—राजेश !" (सब अचरज से देखते हैं—)

शंकर — अरे यह चंदे की रसीद है राजे, आटोग्राफ बुक नहीं।

पद्मा आंचल में मुँह दबाकर हँसती है। शीला खिलखिला पड़ती है। शंकर आंख से दोनों को मना करता है।

कृष्णा मुझे संदेश नहीं चाहिए। मुझे चन्दा चाहिए।

राजेश ओ आइ ऐम सारी! काहे का चन्दा।

कृष्णा बाढ़-रिलीफ का।

राजेश क्यों?

कृष्णा क्यों? उससे हम बाढ़ में मरने वालों को बचायेंगे।

राजेश लेकिन क्यों बचायेंगे उन्हें?

पद्मा तो क्या उन्हें मरने दिया जाय?

राजेश बेशक! कितना बड़ा दम्भ है। हम घास-फूस के छप्परों को बह जाने देते हैं। ढोर-ढंगर को बह जाने देते हैं। आदमियों को बचाने के लिए चन्दा करते हैं। क्यों! क्या ये आदमी घास-फूस और ढोर-ढंगर से किसी माने में बेहतर होते हैं? कभी नहीं डाक्टर। ये लोग कीड़ों से भी बदतर होते हैं। इनका जिन्दा रहना दुनिया के लिए अभिशाप है और इनके लिए यातना। फिर इन्हें क्यों न मरने दिया जाय। मैं जब कभी सोचता हूँ कि इस धरती पर करोड़ों आदमीनुमा कीड़े रेंगते हैं और नारकी जिन्दगी बिताते हैं तो मेरा मन गुस्सा और तरस से भर जाता है। ये, हम सब, क्या हैं हमारी जिन्दगी के माने? करोड़ों साल से हम लोग सितारों की छाँह में धरती पर अपने पद-चिन्ह बनाते हुए चले आये हैं। मगर हैं हम सब भी कीड़े के कीड़े। हमारा अस्तित्व मिट जाय तभी अच्छा हो। मुझे तो अफसोस है कि ये बाढ़ें इतनी कम क्यों आती हैं? मनु के जमाने का जल प्रलय क्यों नहीं आता है! इन्सान की जिन्दगी का नाम-निशान क्यों नहीं खत्म हो जाता? कीड़े? ये सब मरने के ही लिए बने हैं।

शीला तो क्या दया और सहानुभूति कुछ भी नहीं है? राजेश बाबू आप क्या कह रहे हैं?

कृष्णा दिस इज़ ब्रूटिश।

राजेश *तो क्या दया कम ब्रूटिश होती है डाक्टर साहब ! अभी उस बलि के बकरे को देखा था। दया तो हमारे व्यवहार का महज वह अंश है* जिसमें हम बकरे को फूल-माला से लादते रहते हैं। डाक्टर साहब ! हमारे दो चेहरे हैं। एक जो हम दुनिया को दिखाते हैं, वह है दया, ममता, स्नेह, प्रेम का चेहरा; एक वह जो हम खुद देखते हैं, वह है क्रूरता, घृणा, हिंसा, प्रतिशोध का चेहरा और यही जिन्दगी की असलियत है मेरे दोस्त ! दया करके, प्रेम करके, हम हमेशा जिन्दगी की असली कुरूपता को ढँकने की कोशिश करते रहे हैं। यह गलत है। असलियत यह है कि जिन्दगी क्रूर है, जिन्दगी कुरूप है, घिनौनी है और आदमी उसे बदल नहीं सकता। आदमी को मर जाना चाहिए। खत्म हो जाना चाहिए।

शंकर यह फिलासफी की बात दूर—लाओ तुम्हारे नाम से चन्दा लिख दूँ।

राजेश चन्दा—यही लाइनें मेरा चन्दा है। यह तो रसीद बुक है। यह मैं आग की लपटों पर लिख सकता हूँ, पानी की लहरों पर लिख सकता हूँ, आसमान के बादलों पर यही लिख सकता हूँ। यही जीवन का ध्रुव सत्य है। कह दो आदमियत से वह मर जाय। चूँकि आज तक उसकी दिशाएँ अस्पष्ट हैं, धुँधली हैं। छिः ! (उसी आवेश में) मैं बाथरूम जा रहा हूँ नहाऊँगा मैं। अन्दर जैसे भट्ठी सुलग रही हो।

चला जाता है।

शंकर कृष्णा, कल इन्हें इक्जामिन करो जरा। जानते हो यह बड़े अच्छे लेखक हैं।

कृष्णा हिन्दी के न ? तभी ये न्यूराटिक हैं। मानसिक रोग है शंकर भइया !

पद्मा रोग नहीं, बहुत गम्भीर बात कहते हैं ये। मैं तो जैसे बह गई थी।

कृष्णा आश्चर्य से पद्मा की ओर देखता है, वह लजा जाती है।

कृष्णा अच्छा कल देखूँगा इन्हें। अब जरा रिलीफ-कमेटी की मीटिंग में जाना है।

शंकर क्या हालत है बाढ़ की।

पद्मा सब जगह पानी भर गया है जीजा। देवी के मन्दिर पर भी पानी आ रहा है। इस साल फिर कोई बेचारा डूबेगा।

कृष्णा वाहियात ! महज अन्ध-विश्वास है। हाँ शंकर भइया, इनमें बड़ी आत्मघाती प्रवृत्तियाँ हैं। जरा सम्हाल कर रखना...

शीला घबड़ाई हुई आती है।

शीला सुनते हो, उन्हें दिल का दौरा फिर आ गया है।

सब अन्दर जाते हैं।

पर्दा गिरता है।

दृश्य २

दो सप्ताह बाद अपने कमरे में बैठी हुई पद्मा मुसम्मी निचोड़ रही है। उसका चेहरा क्लान्त है और बाल बिखरे हुए हैं। मुद्रा गंभीर और चिन्तामग्न है। अन्दर से कृष्णा आता है। हाथ में स्टेथेस्कोप और सूटकेस, साथ में शंकर।

पद्मा क्यों, क्या रीडिंग है ?

कृष्णा बहुत अच्छी है तबियत अब तो। दस दिन में आधा मर्ज चला गया।

शंकर इसका सेहरा तो पद्मा के सिर बँधना चाहिए। उसने दिन-रात एक कर दिया कृष्णा ! मैं नहीं समझता था कि ये इतनी सुश्रुषा कर सकती है।

पद्मा अरे जीजा, इतनी तारीफ न करो नजर लग जायगी ! हाँ तो कृष्णा तुमने कुछ एनालाइज किया।

कृष्णा हाँ बताते हैं अभी, शंकर भइया। उन्हें आप इसी कमरे में ले आइये। उसका वातावरण बहुत मनहूस है।

शंकर जाता है।

पद्मा हाँ तो बताओ कृष्णा।

कृष्णा डाक्टर से ज्यादा तो शायद तुम मरीज के बारे में जानने के लिए आतुर हो (गहरी साँस लेकर) दस दिन में जिन्दगी का चक्र कितना घूम गया है पद्मा !

पद्मा कृष्णा, कृष्णा ! बोली न बोला करो। तुम्हारा मन इतना छोटा है, यह मैं नहीं जानती थी।

कृष्णा तुम्हारा मन इतना अस्थिर है, यह मैं नहीं जानता था पद्मा ! इन दस दिनों में जैसे दुनिया बदल गई है। मेरा सब कुछ खो गया पद्मा। अब तुम्हें मेरे बारे में कोई दिलचस्पी ही नहीं रही। वह न्यूराटिक, आत्मघाती तुम्हारे लिए सब कुछ हो गया।

पद्मा कृष्णा, कृष्णा ! इस तरह की बातें सुनने की मैं आदी नहीं। वह कुछ भी हों मैं उन्हें श्रद्धा करती हूँ, ममता करती हूँ, प्रेम......(रुक जाती है)

कृष्णा प्रेम करती हूँ ! कहो न ! आखिर हो न औरत ! बदलते देर नहीं लगती।

पद्मा आखिर हो न पुरुष ! अधिकार की प्यास जायगी थोड़े। ब्याह हो गया होता तो जाने क्या करते—(कृष्णा स्तब्ध रह जाता है—एक टक पद्मा की ओर देखता है, धीरे-धीरे कुर्सी पर बैठ जाता है। माथे पर हाथ रख कर, सोचने लगता है। पद्मा उठती है और धीरे-धीरे कुर्सी के पीछे खड़ी हो जाती है। बालों में उँगलियाँ डालकर—) नाराज हो गए कृष्णा ! (चुप रहता है—कन्धा झकझोर कर) बोलो ! सचमुच मैं अपने को समझ नहीं पाती कृष्णा, मुझे क्या हो गया है। मैं जानती हूँ तुम्हारे मन में मेरे लिए क्या है, लेकिन क्या करूँ कृष्णा। उनके मन के दर्द को जिस दिन पहचाना है उस दिन से जैसे उसने मन को बाँध लिया है। लगता है जैसे उनके दर्द का एक ज़र्रा मेरे सारे व्यक्तित्व, सारे प्रेम से बड़ा है। मेरा प्रेम अब भी तुम्हारे लिए है, लेकिन लगता है यदि उनके दर्द में ज़रा सी

कभी हो सके तो मेरा सारा व्यक्तित्व सार्थक हो जाय। यकीन मानो कृष्णा मैं उन्हें प्यार नहीं करती। उनकी आँखों में इतनी अँधेरी गहराइयाँ हैं कि उनमें झांकते हुए मुझे डर लगता है, लेकिन जाने कैसा जहरीला जादू है उनमें कि डूब जाती हूँ। मुझे खुद अपने ऊपर बड़ा गुस्सा आता है और जब वह मुझ से नहीं सम्हल पाता तो तुम पर उतर जाता है कृष्णा !.... बोलो....(कृष्णा केवल आँख उठा कर देखता है और चुपचाप सर नीचे कर लेता है...) माफ कर दो कृष्णा। थोड़े दिन में तो वे यहाँ से चले जायँगे, तब तक उनकी सेवा कर लेने दो। मुझे लगता है कि....

कृष्णा मैं जानता हूँ मैं बहुत नीरस हूँ पद्मा। तुम्हारे योग्य नहीं। लेकिन, मैं क्या करूँ। अगर मेरी जिन्दगी में कोई है जिसकी वजह से मैंने कुछ ऊँचाई पाई है तो वह तुम हो....लेकिन खैर.......

पद्मा तुम्हारी इसी बात से मेरा मन भर आता है ! (एक आँसू टप से गिर पड़ता है, गला भर आता है) मैं क्या करूँ ? (रोने लगती है ।)

कृष्णा अरे रोओ मत। बैठो ! आँसू पोंछो। तुम जैसी भी हो मुझे स्वीकार हो पद्मा ! काश कि तुम समझ पातीं...लेकिन खैर जाने दो। आओ बताएँ उन्होंने क्या बताया। आँसू पोंछ डालो...हँसो...हाँ ऐसे...तुम्हें मालूम है ? वे इसलिये इतने निराश हैं, इसलिये आत्महत्या करना चाहते हैं कि वह लड़की उन्हें मिल न सकी जिसे वह......

पद्मा (चीख कर) छि: कृष्णा, उन्हें इतने नीचे न घसीटो।

कृष्णा (कड़ए स्वर में) तो तुम्हारी पूजा से वह ऊँचे तो हो नहीं जायँगे।

पद्मा (और भी कड़ुए स्वर में) तुम्हारी व्याख्या से वह नीचे तो गिरेंगे नहीं। बेवकूफ मत बनाओ मुझे। उन्होंने तुमसे पहले मुझे बता दिया है, सब बता दिया है। उन्होंने बताया है कि उन्होंने और कामिनी ने निश्चय किया था कि वे जीवन भर अलग रहेंगे, प्रतिदान न लेंगे। मगर अपने प्यार से दोनों एक दूसरे का व्यक्तित्व सम्हालते चलेंगे। पर अब कामिनी धीरे-धीरे मुर्झा रही है और वह रोक नहीं पाते...उनके सामने जीवन का एक अर्थ था। और अब उनका जीवन निरर्थक है। वह जिन्दा नहीं रहना चाहते...कितनी गहराई से सोचते हैं वह कृष्णा! तुम समझ नहीं सकते।

कृष्णा तुम तो समझती हो।

पद्मा हाँ समझती हूँ। और तुम्हारे इस तरह बोलने से मैं डर नहीं जाऊँगी। तुम उनके पैरों की धूल भी नहीं हो। तुम इस ऊँचाई से सोच भी नहीं सकते।

कृष्णा कभी नहीं सोच सकता। ईश्वर न करे मैं वहाँ से सोचूँ। औरत जो एक शाम को बदल सकती है, उस औरत के पीछे में आत्महत्या नहीं कर सकता। छिः.........

तेजी से निकल जाता है।

पद्मा कृष्णा! कृष्णा...सुनो। उफ मुझे क्या हो गया है। (मेज पर सिर रख कर रोने लगती है—दाईं ओर से शंकर का सहारा लिए हुए राजेश आता है)

शंकर पद्मा! जरा कुर्सी खिड़की के पास डाल दो।

पद्मा जल्दी से आँख पोंछकर उठती है, और कुर्सी डाल देती है। राजेश बैठ जाता है। शंकर उसके पैरों पर चादर डाल देता है। पद्मा मुसम्मी का रस लाकर देती है।

शंकर अच्छा मैं डिस्पेन्सरी जाकर दवा ले आऊँ। शीला ! ओ शीला ! जरा शीशी दे जाना......पद्मा, तुम्हारी आँख क्यों लाल है ?

पद्मा सर में दर्द है जीजा।

राजेश मेरी वजह से अगर सब से ज्यादा मेज़बानी किसी पर लदी तो इन पर। मुर्दे को लोग मरने भी तो नहीं देते।

पद्मा मरें आपके दुश्मन। आपके बिना हमारे जीजा नहीं विधवा हो जायेंगे।

शंकर और राजेश हँसते हैं—शीला लाकर शीशी देती है—शंकर लेकर जाता है।

राजेश बैठो भाभी।

शीला दूध चढ़ा आई हूँ, उतार आऊँ।

पद्मा अरे बैठो भी दीदी। (हाथ पकड़ कर बिठाल लेती है)

शीला राजेश बाबू ! अब शादी कर लो तुम। ये सब तो हर एक की जिन्दगी में होता है। शादी कर लो। बिखरा हुआ मन बँध जायगा और धीरे-धीरे सब ठीक हो जायगा।

राजेश (हाथ जोड़ कर) क्षमा करो भाभी। क्या इतना प्रायश्चित्त काफी नहीं है ?

पद्मा अच्छा तो है राजेश बाबू, शादी कर लीजिये, इतना डरते क्यों हैं ?

राजेश डरते क्यों हैं ? बुरा न मानना, मैंने सुना था अफ्रीका में एक नरभक्षी पेड़ होता है। जहाँ कोई उसके समीप गया कि उसके पत्ते उसे झुककर लपेट लेते हैं। और उसके बाद वह अपने जहरीले रेशमी काँटों से बूँद-बूँद खून चूस कर हड्डियाँ फेंक देते हैं। औरत भी बिल्कुल ऐसी ही है। किसी भी जीनियस को देखते ही वह अपनी बाँहों में कस लेती है और फिर व्यक्तित्व को बूँद-बूँद चूस कर उसे फेंक देती है।

शीला — अच्छा तो इसके मतलब तुम्हारे मित्र का व्यक्तित्व मैंने खत्म कर दिया है। जाइये, जनाब, मैं न होती तो........

पद्मा — अरे दीदी, वह जीनियस की बात कर रहे हैं! जीजा कहाँ के जीनियस थे? (राजेश और शीला हँस पड़ते हैं)

शीला — तो यह किसी जीनियस लड़की से शादी कर लें।

राजेश — जीनियस और लडकी। यह सर्वथा अन्तर्विरोध है। औरत जीनियस हो ही नहीं सकती। उसके लिये जिन्दगी का वाह्य सब से प्रमुख होता है। कामिनी के ही बारे में मैंने आपको बताया था। वाह्य परिस्थितियाँ उसके अन्तर के सौन्दर्य को नष्ट कर रही हैं और वह चुपचाप है। यह कोई प्रतिभा है। प्रतिभा विद्रोह करती है, सृजन करती है। नारी केवल प्रसव करती है या प्रसाधन, प्रसव की भूमिका...क्षमा कीजियेगा। यही हैं पद्मा। इनकी मेज पर कामायनी रक्खी है। लेकिन कामायनी के ऊपर क्या है? पाउडर का डिब्बा।

शीला — (सहसा चौंक कर) दध जल रहा है। मै अभी आई।

चली जाती है, पद्मा उठती है और पाउडर का डिब्बा उठाकर फेंक देती है। राजेश चौंक जाता है।

राजेश — अरे यह क्या? आप बुरा मान गईं। मैंने तो उदाहरण दिया था। मैं क्या आपको समझता नहीं हूँ!

पद्मा — समझते हैं आप! खूब समझते हैं। जहाँ नारी दुर्बल है, कमजोर है, वहाँ उसे गाली दे लीजिये, लेकिन जहाँ वह ममता दे देती है, अपना सब कुछ दे देती है, वहाँ भी आप लोग कहने से नहीं चूकते।

राजेश — गलत समझीं आप पद्मा जी। आपको क्या मैंने समझा नहीं! आप ही ने तो मेरी जान बचाई है।

पद्मा देखिये आप होंगे आप ! मैं तो तुम हूँ !

राजेश (गहरी साँस लेकर) तुम सही पद्मा । लेकिन तुम इतनी ममता से बात न किया करो ! तुम नहीं समझतीं कि प्यार न मिलने से मन में एक घाव होता है, लेकिन एक घाव और होता है जो प्यार मिलने से बुरी तरह कसक उठता है । तुम क्यों, क्यों इतनी ममता बढ़ा रही हो ?

पद्मा पता नहीं क्यों । मैं खुद नहीं समझ पाती । जाने कैसा मन्त्र सा छा गया है मुझ पर । लगता है जैसे मैं आपे में नहीं हूँ ।

राजेश लेकिन यह बुरी बात है ।

पद्मा जानती हूँ यह गलत बात है, फिर भी आप कभी नहीं समझ सकते आप मेरे लिये क्या हो गये हैं । लगता है मेरी जिन्दगी का अर्थ मेरे सामने खुल गया है । कोई छाया थी जो बार-बार सपनों में आती थी । मैं पुकारती रहती थी, वह चली जाती थी, आपको पाकर मैं उस छाया को पा गई हूँ ।

राजेश (आवेश से) पद्मा । क्या कह रही हो तुम ?

पद्मा कह लेने दीजिए मुझे । फिर कभी न कहूँगी, लेकिन जो कुछ कह रही हूँ वह अक्षर-अक्षर सही है, मैं आज तक कविताएँ गाती थी । आप को पाकर उन गीतों की आत्मा पा गई हूँ । आपको खुद नहीं मालूम कि आते ही आपने क्या किया था । आते ही मेरा चित्र उलट दिया था ! मेरा व्यक्तित्व उलट दिया था ; बताइये क्यों किया था आपने ? क्यों ? क्यों आपने उन गहराइयों में उतार दिया, जहाँ आपके सिवा कोई नहीं है ?

राजेश लेकिन पद्मा.....डाक्टर ?

पद्मा मैं स्वयं नहीं जानती उनके लिये क्या करूँ । आज लगता है

जैसे वे मेरे प्यार की पगडण्डी थे, जिसे मैं छोड़ आई हूँ। आप मंजिल हैं जहाँ मैं पहुँचना चाहती हूँ।

सहसा शीला का प्रवेश।

शीला पद्मा! जरा जाकर धोबी को कपड़े दे आओ! जल्दी जाओ। (पद्मा जाती है) राजेश बाबू, आज शाम को नाश्ते के लिये क्या बनाऊँ?

राजेश (गम्भीर विचार में) कुछ नहीं! चाहे जो बना दो।

शीला मूँग का हलुआ अच्छा लगता है। (राजेश स्वीकृति में सिर हिला देता है।)

डाक्टर आता है, अस्त-व्यस्त!

कृष्णा भाभी इनसे कुछ बातें करनी हैं एकान्त में....अगर.....

शीला हाँ, हाँ। मैं जाती हूँ। (जाती है)

राजेश (उत्सुकता से डाक्टर की ओर देखता है) क्या है डाक्टर?

कृष्णा (कुछ देर चुप रहकर) राजेश बाबू (बहुत कड़े स्वर में) मैंने तुम्हारी जान बचाई है—और.... और तुमने.... (सहसा धीमे पड़ कर गहरी साँस लेकर) लेकिन जाने दो मुझे यह कहना भी उचित नहीं है। लेकिन मैं तुम्हें ऐसा नहीं समझता था। (सहसा तेज होकर) लेकिन तुम चुप हो जैसे कुछ जानते ही नहीं, तुम चुप रह कर....

राजेश लेकिन मेरा क्या दोष?

कृष्णा तुम्हारा क्या दोष? दोष है तुम्हारी उल्टी-सीधी बातों का, जिनमें आदमियों को बेहोश बनाने का नशा है। माना मुझ में इन्टेलेक्ट नहीं है। मैं लच्छेदार बातें नहीं कर पाता, मेरे व्यक्तित्व में आग नहीं, इसके मतलब यह नहीं कि मेरा सब कुछ छिन जाय। तुमने यह काँटे बोए हैं, तुमने यह जहर

घोला है । जहर....जानते हो....मैं सब कुछ खोकर भी स्वयं नहीं मरूँगा....लेकिन यह देखते हो.... (बैग से एक शीशी निकाल कर) दवा में इसकी एक बूँद तुम्हारे लिये काफी है....मैं नष्ट होना नहीं जानता, मैं कायर नहीं हूँ....

राजेश (हाथ बढ़ाकर) कितने मेहरबान हो कृष्णा तुम । इसी दवा की तो मुझे तलाश है । काश कि तुम समझ पाते कि कितनी बेचैनी है इस हृदय में ! कब से मैं धधक रहा हूँ । मैं खुद तुम लोगों की जिन्दगी के बीच से हट जाना चाहता हूँ । मुझे किसी का मोह नहीं रहा, जिसे प्राणों से बढ़ कर प्यार किया जब उसी....लाओ दो शीशी दो !.....

कृष्णा (उठ कर) कभी नहीं, मेरा काम जिलाना है, मैं डाक्टर हूँ, मैं जहर नहीं दे सकता हूँ, मैं दवा देता हूँ (खिड़की के पास जाकर शीशी फेंक देता है, मुड़ कर पद्मा के चित्र को देख कर) काश कि तुम कभी भी समझ पातीं मैं जीनियस नहीं हूँ, मगर तुच्छ भी नहीं हूँ....(लौट कर, राजेश के कन्धे पर हाथ रख कर) मगर मैं क्या करूँ । कोई भी तो मेरे दर्द को नहीं.....

राजेश (हाथों में उसके हाथ लेकर) मैं समझता हूँ डाक्टर, मैं समझता हूँ । मैं कितना तुच्छ हूँ । कैसा फूटा नसीब है मेरा कि जो मेरे संसर्ग में आता है उसी को आग लग जाती है । मैं समझता हूँ—मैं तुम्हारे रास्ते से हट जाऊँगा । कृष्णा.... ....मैं समझता हूँ....

कृष्णा (गमगीन आवाज में) मुझे कोई नहीं समझता.... कोई नहीं....

धीरे-धीरे चला जाता है । राजेश कमरे में टहलने लगता है ।

राजेश जिन्दगी का कुछ अर्थ नहीं रहा मेरे सामने। एक प्रेतात्मा की तरह जिस वातावरण में रहता हूँ वही अभिशप्त हो जाता है। मौत में इतनी तकलीफ तो नहीं होगी, इतनी उलझन तो नहीं होगी। जिन्दगी तो मुझे नीच साबित करने पर तुली है। अब मुझे जाना ही पड़ेगा। मुझे कोई नहीं रोक सकता (मुट्ठी तान कर) कोई नहीं—दुनिया मेरे लिये बहुत छोटी है, जिन्दगी बहुत सकरी है। (खिड़की से उतर जाता है। उतरने में पैर लगकर पद्मा की तस्वीर गिर कर टूट जाती है।)

पर्दा गिरता है।

दृश्य ३

वही कमरा---शंकर बेचैनी से टहल रहा है--शीला सर झुकाए बैठी है।

शंकर (सहसा रुक कर) सारी गलती तुम्हारी है। मैंने बार-बार कह दिया था कि चाहे आस्मान फट पडे, तुम राजेश को एक मिनट के लिए भी अकेला न छोड़ना, लेकिन तुमने कभी कहना माना ? तुम समझती हो कि अगर राजेश को कुछ हो गया तो मैं किसी को मुँह दिखला सकूँगा ? (फिर टहलने लगता है)

पद्मा आती है।

पद्मा कुछ पता लगा जीजा।

शंकर कुछ नहीं! पुलिस में रिपोर्ट की, जाल छुड़वाया, मल्लाहों से पूछा, स्टेशन पर जाँच की, कहीं से कोई जवाब नहीं........ (सहसा मुड़कर) लाओ कुछ रुपये निकाल लाओ, जब तक ढूढ़ूँगा नहीं, तब तक वापस नहीं आऊँगा। (शीला चुपचाप उठकर अन्दर जाती है। शंकर फिर टहलने लगता है। पद्मा एक टक खिड़की के बाहर देखती है, शीला लाकर पर्स देती है। शंकर बाहर जाता है)

शीला (डरते-डरते) कुछ खा तो लो, कल से एक बूँद पानी नहीं डाला मुँह में।

शंकर खाओ तुम! मैं तो सिर्फ़ ज़हर खाऊँगा......

तेज़ी से चला जाता है। शीला रोते-रोते अन्दर चली जाती है। पद्मा दरवाज़े पर खड़ी होकर शंकर को देखती है, फिर लौट कर पलंग पर गिर जाती है और राजेश की अटैची पर सिर रख कर फूट-फूट कर रोने लगती है। कृष्णा आता है।

कृष्णा कुछ पता लगा! (पद्मा कुछ जवाब नहीं देती, वह क्षण भर खड़ा रहता है, फिर पलंग पर बैठ जाता है। पद्मा के सिर पर हाथ रख कर) पद्मा इतना क्यों रोती हो (गहरी साँस लेकर) धीरज रक्खो......

पद्मा (सहसा फुफकार उठती है, उसका हाथ झटक कर) दूर रहो छुओ मत मुझे। मुझे सब मालूम है। तुम इतने पशु हो मैं नहीं जानती थी।

कृष्णा मै ?

पद्मा हाँ! तुम! तुम! तुम! मुझ से छिपो मत, यह देखो, यह खिड़की के पास था (जहर की शीशी देती है) तुम्हारे दवाखाने की है यह, तुम्हीं आये थे उस वक्त। मैं अभी दीदी को दिखा सकती हूँ। अभी पुलिस को दे सकती हूँ, लेकिन......(रोने लगती है) मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा था कृष्णा? तुमने उन्हें ज़हर पिला दिया। मैं उनसे शादी नहीं करती। मगर तुमसे इतना भी बर्दाश्त नहीं हुआ। फिर तुमने किस कलेजे से यह शीशी दी होगी उन्हें। हत्या! उफ़!

कृष्णा लेकिन पद्मा सुनो तो........

पद्मा (चीख कर) मैं तुमसे नफ़रत करती हूँ। तुम्हारी शक्ल भी नहीं देखना चाहती। चले जाओ, अभी चले जाओ। वरना मैं दीदी को बुलाती हूँ.........

कृष्णा क्षण भर रुक कर पद्मा को देखता है। फिर सिर झुका कर चला जाता है, पद्मा रोने लगती है। फिर उठ खड़ी होती है, अपने चित्र के टुकड़े उठाती है और फिर उन सब को फेंक कर बदहवास हो कुर्सी पर बैठ जाती है। थोड़ी देर बाद शंकर आता है, साथ में राजेश है।

शंकर शीला ! शीला ! लो राजेश आ गये।

पद्मा चौंक पड़ती है, उछल कर पीछे खड़ी हो जाती है, झट से आँसू पोंछती है, आँसू बहने लगते हैं। शीला भागी हुई आती है।

शीला वाह राजेश बाबू। परेशान कर डाला आपने तो। आज न आते तो शायद कल आपके भइया मुझे तलाक दे देते।

शंकर अरे इसी उम्मीद मे तो ये लौट रहे थे कि शायद मैं तलाक दे चुका हूँ।

पद्मा ये थे कहाँ जीजा ?

शंकर इन्हीं से पूछो। शीला, जल्दी से दूध गर्म करो इनके लिए।

राजेश लेकिन मैं इसी गाड़ी से घर जाऊँगा।

पद्मा (सहसा विचित्र स्वर में चौंककर) अरे डाक्टर......

शंकर हाँ, अरे पहले डाक्टर से सलाह तो ले लो।

राजेश नहीं मैं रुक नहीं सकता अब, एक दिन भी नहीं।

शंकर अच्छा ! अच्छा ! मैं खुद नहीं रोकूँगा तुम्हें। कृष्णा से पूछ आऊँ जल्दी से। सुनो पद्मा ! (पद्मा को अलग बुलाकर) इनकी

अटैची ठीक कर दो और शीला से सौ रुपये लेकर रख देना उसमें ?

जाता है।

पद्मा (राजेश से) आप कहाँ चले गये थे ? सच आपको जरा भी ख्याल नहीं है किसी का। आप गये कहाँ थे ?

राजेश अजब सी बात है पद्मा ! विश्वास करोगी ! मैं गया था देवी के मन्दिर, डूबने के लिए ! (पद्मा चीख पड़ती है) न चीखो मत। तुम जानती हो, मैं कितना ऊब गया था अपने से ! अपनी जिन्दगी एक भार थी मेरे लिए, धीरे-धीरे वह सभी के लिए भार बन गई। सबकी जिन्दगी के बाँध मेरी वजह से टूटने लगे। मैं कितना आत्मदंशन बर्दाश्त करता। मैंने निश्चित कर लिया कि अब मेरी मौत ही हर उलझन का इलाज है। किसी को भी तो सुख न दे पाया मैं। (उठकर टहलने लगता है)

पद्मा आप बैठे रहिये।

राजेश नहीं अब मैं ठीक हूँ – बिलकुल ठीक—हाँ तो मुझमें उस वक्त जाने कितनी ताकत आ गई। मैं देवी के मन्दिर के पास गया। मैंने अपने मन में सोचा था कि बहुत भयानक जगह होगी । लेकिन वह तो बहुत खुशनुमा जगह थी। मन्दिर का सिर्फ गुम्बद चमक रहा था। पीपल और पाकड़ के पेड़ डूब गये थे। इतनी खामोशी थी चारों ओर कि लगता था हजारों मील से पत्थरों से टकराती, गाँवों को डुबाती हुई यह नदी इन पेड़ों की छाँह में आकर सो गई है। मैं चुपचाप खड़ा रहा। कुछ दूर तक पेड़ों की छाँह से पानी साँवला पड़ गया था। थोड़ी देर में सूरज डूबने लगा। सैकड़ों सिन्दूरी बादल पानी में उतर आये और फूल की तरह धीरे-धीरे

बहने लगे। म चुपचाप था। पता नहीं किसने मेरे कदमों की ताकत छीन ली थी। धीरे-धीरे मेरी आँखों से आँसू बहने लगे। मुझे लगा मैं क्यों मरना चाहता हूँ। जिन्दगी तो इतनी सुन्दर है, इतनी शान्त है। मुझे जिन्दगी का नया पहलू मिला उस दिन। वह यह कि चाहे ऊपर की सतह मटमैली हो, मगर जिन्दगी की तहों के नीचे गुलाब के बादलों का कारवाँ चलता रहता है। क्रूरता, कुरूपता के नीचे सौन्दर्य है, प्रेम है और सौन्दर्य और प्रेम, कुरूपता और क्रूरता को चीरकर नीचे पैठ जाता है। उसे देखने के लिए महज आँख में नया सूरज होना चाहिये, पद्मा। (गहरी साँस ले कर) और धीरे-धीरे लगा कि जैसे मन की सारी कटुता, सारी निराशा, सारा अँधेरा, धुलता जा रहा है। लगा कि जब तक जिन्दगी में एक कण सौन्दर्य है, तब तक मरना पाप है। पागलों की तरह उन्हीं तैरते हुए बादलों के साथ मैं चल पड़ा......अँधेरा हो गया...... (शीला दूध लाकर रख देती है और बैठ जाती है) मैं वहीं बैठ गया। थोड़ी देर में उधर कुछ सियार आये। वे लोग किसी की लाश को घसीट रहे थे। मुझे देखकर भागे। मैं समीप गया, देखा एक दस-बारह साल का लड़का है। अभी साँस चल रही है। मैंने उसे बाहर निकाला। मन काँप उठा। मगर उठाकर लाने की ताकत नहीं थी। कितना सुन्दर था वह, कितना मासूम। मैं बैठकर सियारों से उसकी रखवाली करने लगा। उस तरफ सियारे थे, इस तरफ लाश। बीच में मैं उसकी रखवाली कर रहा था। चारों ओर सुनसान! लग रहा था आसमान से अजब सी शान्ति मेरी आत्मा पर बरस रही है। मेरे व्यक्तित्व के रेशे फिर से सुलझते जा रहे हैं, और यह लड़का वह चिरन्तन

जीवन है, वह सौन्दर्य है जिसकी रखवाली में युगों से करता आ रहा हूँ और युगों तक करता जाऊँगा। जिन्दगी नील कमल की तरह मेरे सामने खुल गई। मुझे लगा कि आदमी सारी तकलीफ और दर्द के बावजूद इसलिए जिन्दा है कि वह सौन्दर्य और जीवन की खोज करे, उसकी रक्षा करे, उसका निर्माण करे—और सौन्दर्य के निर्माण के दौरान में वह खुद दिनों दिन सुन्दर बनता जाय। अगर कोई नहीं है उसके साथ तो भी वह सौन्दर्य का सपना, वह ईश्वर उसके साथ है। उसे आगे बढ़ना ही है...यही जिन्दगी के माने हैं। इसलिए मैं फिर जिन्दगी में वापस लौट आया कि क्रूरता और कमजोरी के सामने हारूँगा नहीं मरूँगा नहीं, सौन्दर्य का सृजन करूँगा और सुन्दर बनूँगा। जिन्दगी बहुत प्यारी है, बहुत अच्छी है, और आदमी को बहुत काम करना है।

शीला और उस लड़के का क्या हुआ ?

राजेश उसे रिलीफ की नाव ले गई। मैं इधर आ रहा था तो शंकर भइया मिल गये।

शीला दूध ठंडा हो रहा है पी लो। मैं फल ले आऊँ। (जाती है)

पद्मा तो अब आप जा क्यों रहे हैं ? लीजिए दूध पीजिए। (मुँह से गिलास लगा देती है)

राजेश (पीकर) मैं जा रहा हूँ इसलिए कि मेरी जगह वहीं है जहाँ कुरूपता और क्रूरता है। जहाँ मेरे सपने टूटे हैं क्योंकि वहीं मुझे लड़ना है। वहीं प्यार बिखेरना है, वहीं निर्माण करना है। मैंने जीवन का सत्य पाया है और उसे लेकर कामिनी के पास जाऊँगा, फिर सारी दुनिया के पास और अगर कोई नहीं मिलता तो अकेले, बिल्कुल अकेले चलूँगा, लेकिन हारूँगा नहीं। (पद्मा चुपचाप खिड़की के बाहर

देखती है और आँचल से आँसू पोंछती है। राजेश उठकर उसके पास खड़ा हो जाता है। सिर पर हाथ रखता है)

राजेश — पद्मा! यह मोह गलत है। मुझे तो जाना ही है पद्मा! लेकिन तुम मेरी बात समझो, हर चीज का सौन्दर्य पहचानो, उसे प्यार करो। मेरी बात मानोगी।

पद्मा — मैंने कभी टाली है आपकी बात?

राजेश — देखो पद्मा कृष्णा को तुम्हारी जरूरत है। मैंने भी आज यही सीखा और तुम्हें भी यही कहूँगा कि दूसरों की जरूरत के लिए जिन्दा रहो, अपने लिए नहीं। तुमने उसे प्यार किया है मुझे नहीं। मुझसे तो तुम केवल मुग्ध रही हो। एक बौद्धिक सम्मोहन मात्र! समझीं। (पद्मा सिसकती है) छि: ऐसा नहीं करते पगली। उससे समझौता कर लो। उसके पास भाषा नहीं मगर हृदय बहुत बड़ा है। बहुत सुकुमार। उससे समझौता कर लेना। फिर अपने ब्याह में बुलाओगी हमें? बोलो!

पद्मा — (रूँधे गले से) हाँ......

शीला फल लाती है

शीला — क्या सचमुच अभी जाओगे राजेश?

राजेश — हाँ भाभी! पद्मा, जल्दी से अटैची ठीक करो...भाभी! ऊपर हमारे कपड़े पड़े होंगे।

शीला — अभी लाई।

जाती है। राजेश चुपचाप बैठा है। बाहर कोई बड़े दर्दनाक स्वरों में वही गीत गाता है—'हाऽऽय बाढ़ी ऽऽ नदियाऽऽ' ....

पद्मा — (अटैची सम्हालते हुए) क्या सोच रहे हैं आप! जो आप कह रहे हैं, वही होगा। सचमुच मैंने कृष्णा से बहुत कठोर व्यवहार किया है। मैं उनसे क्षमा माँग लूँगी। मैं उन्हें समझा लूँगी।

(खिड़की के सामने से दो मुसाफिर बात करते हुए जा रहे हैं—"बिलकुल घट गया जल, मन्दिर से.........बड़ा अचम्भा है।" गीत बराबर चल रहा है .... 'चढ़उबै पाठा जवान।' शंकर आता है। माथे पर बेहद पसीना)

शंकर पद्मा एक गिलास पानी लाओ जल्दी से.....

पद्मा जाती है।

राजेश क्या हुआ ? पूछा कृष्णा से ? मैं आज जाऊँगा जरूर। मेरा मन नाच रहा है शंकर। कृष्णा मुझसे मिलने नहीं आएँगे ?

शंकर (पलंग पर लेटते हुए) नहीं आयेंगे—पद्मा से कहना मत। उन्होंने खुदकुशी कर ली—वही देवी के मन्दिर के पास डूबकर. . . .

पद्मा (दरवाजे पर सुनकर, चीखते हुए) भइया ! (गिलास छूट जाता है। शंकर से लिपटकर) भइया ! (सिसक सिसक कर रोने लगती है)

संगीत फिर तेज हो उठता है, गूँज उठता है—

'हाय बाढ़ी नदिया जिया लैके मानै !'

तेज होते हुए संगीत के साथ पर्दा गिरता है

नीली झील

पात्र

नीली झील का तान्त्रिक

नीली झील की पहली सन्तान

नीली झील की दूसरी सन्तान

नीली झील की आत्माहीन सन्तान

घटना-काल : ईसा जन्म के १९५० वर्ष बाद

अजब से बेडौल शक्ल वाले, काले-कुबड़े पर्वत शिखर, जिनको बीच-बीच में टेढ़े-मेढ़े रहस्यमय साँपों जैसे दर्रे चीरते हुए अँधेरे में खो जाते हैं। चट्टानें जहाँ खत्म होती हैं वहाँ से झील तक भूरी, सुनहरी, सूखी घास वाले मैदान की एक चन्द्राकार पट्टी है। उसके बाद शान्त नीली झील है, ज्यामिति के अठकोण के आकार की। किनारे पर एक बिल्कुल अपरिचित ढंग का पेड़ है जिसमें झील के आकार और रूप-रंग के बड़े-बड़े लम्बे पत्ते। पेड़ की कई जड़ें फूटी हैं।

पहाड़ों पर एक हल्का आलोक छाया है जिसमें कोहरे की एक हल्की चादर किसी विशाल गरुड़ के पंखों की तरह छाई है। सारा दृश्य इन्द्रजाल मालूम होता है। न पहाड़ असली है, न पेड़; न कोहरा, न झील और न बाँसुरी का वह संगीत ही इस लोक का मालूम होता है, जो जादू के इन नकली रहस्यमय पहाड़ों में रह-रह कर गूँज उठता है। बाँसुरी की तेज होती हुई आवाज के साथ कोने की एक बड़ी चट्टान को हाथ से हटाते हुए एक बूढ़ा प्रवेश करता है। झील के रंग की पोशाक, माथे पर रक्त-चन्दन बाल भौंह तक हिमश्वेत हैं। पीठ दोहरी हो गई है। पैर और गर्दन काँपती है। स्टेज पर आकर झील के किनारे वह रुक जाता है। झुक कर झील में अपनी छाया देखता है और फिर दर्शकों की ओर देखता हुआ कहता है :—

नीली झील ! मैं नीली झील का बूढ़ा तान्त्रिक हूँ। मेरी इन बूढ़ी आँखों ने न कभी झील को सूखते हुए देखा है और न विक्षुब्ध होते हुए। इन काली-सूखी, नंगी और क्रूर चट्टानों के बीच यह झील हममें रस

का संचार करती है, हमें जीवन देती है। हम और हमारी जाति लाखों वर्षों से इन्हीं चट्टानों के बीच, इसी झील के किनारे रहते आए हैं।

स्टेज पर एक ओर से एक व्यक्ति बाँसुरी लिए हुए और दूसरी ओर से दूसरा व्यक्ति एक हाथ में हँसिया, दूसरे में धान के पूले लिये आता है।

यह हमारी जाति के लोग हैं, जो चट्टानों की छाती फोड़ कर जिन्दगी उगाते हैं, और बाँस की टहनियों को गुदगुदा कर संगीत बिखेरते हैं।

पहिला व्यक्ति ये चट्टानें हमें बल देती हैं।

दूसरा व्यक्ति ये वृक्ष हमें छाया देते हैं।

पहला व्यक्ति यह झील हमें जीवन देती है।

दूसरा व्यक्ति हम झील के किनारे चट्टानों के बीच, फूलों की तरह खिलते हैं।

पहला व्यक्ति हम धूप और वर्षा, रेत और तूफान झेल कर फूलों की तरह मुर्झा जाते हैं।

दूसरा व्यक्ति फिर माँ धरती अपनी बाहें खोल कर हमें सुला देती है।....

पहला व्यक्ति और हमारी हड्डियाँ भी जम कर चट्टान बन जाती हैं।

तान्त्रिक पुनः आगे आता है।

तान्त्रिक मुझमें चट्टानों से लड़ने की ताकत नहीं रही। मेरी इन धुँधली आँखों ने त्रिरसठ चन्द्रग्रहण देखे हैं। मेरी इन मुट्ठियों ने सवा सौ फसलें काटी हैं। अब मैं चट्टानों से नहीं लड़ सकता। अब मैं तान्त्रिक हूँ, ये फसलों की देख-भाल करते हैं।

पहला व्यक्ति और तान्त्रिक हमारी आत्मा की देख-भाल करता है।

दूसरा व्यक्ति जैसे चरवाहे भेड़ों की गिनती रखते हैं वैसे तान्त्रिक हमारी आत्मा की गिनती रखता है।

तान्त्रिक जब ये झील के किनारे चलते हैं, इनकी परछाईं झील में लहराती है। जिस दिन इनमें से कोई अपनी आत्मा कहीं खो आता है उस दिन झील क्रुद्ध हो जाती है। उस दिन इनकी परछाईं झील में नहीं झलकती। उस दिन मैं इनसे पूछता हूँ—तुम्हारी आत्मा कहाँ गई और उस दिन जो निरुत्तर हो जाता है, उसे इन अन्धी घाटियों से अपनी आत्मा खोजने अकेले जाना पड़ता है, बिल्कुल अकेले।

पहला व्यक्ति (मायूसी और भय से) उनमें से कोई आज तक लौट कर नहीं आया।

इसी बीच में बाईं ओर के पहाड़ों में से एक बिलकुल आधुनिक ढंग की पोशाक पहने व्यक्ति, हाथ में एक सुन्दर थैला लिए धीरे-धीरे स्टेज के किनारे आकर खड़ा हो जाता है, ठिठका हुआ-सा। उसे देखते ही दूसरा व्यक्ति सहम कर बूढ़े तान्त्रिक का कंधा छूकर संकेत से आगन्तुक को दिखाता है।

दूसरा व्यक्ति (आकुलता से) कौन है यह ?

पहला व्यक्ति (विरोध के स्वर में) यह यहाँ कैसे आया ?

दूसरा व्यक्ति (आकुलता से) हम पर कोई आपत्ति आने वाली है।

तान्त्रिक (बूढ़ी आँखों पर काँपती हुई हथेली रख कर ध्यान से देखता हुआ) कौन हो तुम ? (आगन्तुक खामोश)

पहला युवक (धमकी से) तुम यहाँ कैसे आए ? (आगन्तुक खामोश)

दूसरा युवक यह हमारा देश है। नीली झील की सन्तानों का देश है।

पहला युवक यहाँ हमारे पूर्वज रहते आए हैं। यहाँ उनकी हड्डियाँ चट्टान बन गई हैं।

आगन्तुक खामोश रहता है पर आगे बढ़ता है।

तान्त्रिक यहाँ न कोई जिन्दा आ पाता है, न यहाँ से वापस जिन्दा जा

पाता है । (आगन्तुक खामोश बढ़ता है) पागल लड़के लौट जा, सिवा नीली झील की सन्तानों के, यहाँ कोई कदम नहीं रख सकता ।

पहला व्यक्ति तुम्हारी हड्डियों में मोर्चा लग जायगा।

दूसरा व्यक्ति तुम्हें नीली झील निगल लेगी।

आगन्तुक मैं भी नीली झील की संतान हूँ ।

तान्त्रिक तुम ?

आगन्तुक हाँ मैं, आज से बीस चन्द्रग्रहण पहले पछुआ हवाओं के पीछे-पीछे मैं यहाँ से चला गया था, उधर उस देश में जहाँ झीलें बाँध दी गई हैं, जहाँ नदियों से रोशनी खींची जाती है ।

तान्त्रिक अच्छा याद आया । हम लोगों ने तुम्हारी बहुत खोज की। तुम नहीं मिले, तो हमने पूज्य पर्वतों से तुम्हारे कल्याण की कामना की।

पहला व्यक्ति हमने तुम्हारे लिए नीली झील से कुशलता का आशीर्वाद माँगा ।

तान्त्रिक और तुम्हें नीली झील ने वापस बुला लिया । इधर आओ तुम्हें देखूँ । (तान्त्रिक स्नेह से उसकी बाँह टटोलता है। दोनों व्यक्ति आश्चर्य से उसकी पोशाक छूते हैं। उसका थैला देखते हैं)

आगन्तुक मैंने उस देश में दिग्विजय की और जब कुछ भी ऐसा न बचा जिसे मैं जीत सकूँ तो मुझे याद आई नीली झील की । मैं पर्वतों और झीलों को अर्पण करने के लिए सोना लाया हूँ ।

सोना निकालता है ।

पहला व्यक्ति (आश्चर्य से) सोना।

दूसरा व्यक्ति (लालसा से) सोना।

तान्त्रिक (डाँट कर) सोना ! रख दो उसे। तो तुमने वहाँ सोना निकलवाया।

आगन्तुक मैंने जंगलों से काले हब्शी पकड़े। उनसे खानें खुदवाईं, उनको कोड़े लगवाए और उनसे सोना निकलवाया।

तान्त्रिक और क्या किया उस सोने से ?

आगन्तुक मैंने उस सोने से औरतें खरीदीं, उन औरतों के लिए हाथी दाँत की शय्या और मोती के हार खरीदे।

पहला व्यक्ति हार ! कितना सुन्दर है यह। (तान्त्रिक ताड़ना की नजर से देखता है, वह चुपचाप हार रख देता है।)

तान्त्रिक और ?

आगन्तुक और उनके लिए बारीक कपड़े खरीदे जिनमें वे और भी निर्लज्ज दीख पड़ें।

तान्त्रिक और ?

आगन्तुक और जब उन गुलामों, उन औरतों और उनके पिलपिले बच्चों से तबियत ऊब गई तो मैंने फौलाद की भट्ठियाँ बनवाईं जिनमें उन्हें घास-फूस की तरह झोंक दिया।

पहला व्यक्ति फौलाद की ?

आगन्तुक आगन्तुक हाँ फौलाद की भट्ठियाँ। उनको लोग मशीनें कहते हैं। लेकिन उन मशीनों ने उन गुलामों और औरतों को पीस कर और भी चतुर बना दिया और वे पता नहीं किस चीज के लिए लड़ने लगे जिसे वे (याद करते हुए) अधिकार कहते थे।

तान्त्रिक तब ?

आगन्तुक तब मैंने भी उसी अधिकार की बात कहनी शुरू की। और

एक ओर उन मशीनों और दूसरी ओर उन गुलामों पर कब्जा जमाया और मेरे हाथ में राजदण्ड आ गया और....

तान्त्रिक और ?

आगन्तुक और तब प्रजाओं का राज्य हुआ ! प्रजातन्त्र ! सत्ता मेरे हाथ में थी, तंत्र प्रजाओं का था। फिर प्रजातन्त्र दो हुए। सोने के प्रजातन्त्र और जनता के प्रजातन्त्र, और सोना मेरा था और जनता के दिमागों पर कब्जा मेरा था और प्रजातंत्र दो थे, एक का तानाशाह मैं था और दूसरे का तानाशाह मैं था और मैं अपने से लड़ने लगा।

तान्त्रिक तुम अपने से लड़ने लगे ?

आगन्तुक हाँ। नहीं; मैं तो सिर्फ हुक्म देता था। एक ओर से मेरी प्रजाएँ लड़ती थीं और दूसरी ओर से मेरी प्रजाएँ लड़ती थीं और एक ओर से मेरी प्रजाओं का रक्त बहता था और दूसरी ओर से मेरी प्रजाओं का।रक्त बहता था; इस तरह एक युद्ध हुआ, दूसरा युद्ध हुआ, तीसरा युद्ध हुआ और प्रजाओं को खून का चस्का लग गया और वे कटती-मरती रहीं. . .मैं उनका सोना, उनके कपड़े, उनका अन्न, उनका वैभव, उनका तेज, उनका बल लेकर चला आया नीली झील के देश में।

तान्त्रिक तो तुम उस देश से अपना सोना सही-सलामत ले आए ?

आगन्तुक आगन्तुक मैं उस देश से उनका सोना सही-सलामत ले आया।

तान्त्रिक तुम उस देश से अपना अन्न, बल, वैभव, तेज सही-सलामत ले आए ?

आगन्तुक मैं उस देश से प्रजाओं का अन्न, बल, वैभव, तेज, सही-सलामत ले आया।

तान्त्रिक और अपनी आत्मा ?

आगन्तुक आगन्तुक—आत्मा ?

तान्त्रिक तुम उस देश से अपनी आत्मा सही-सलामत ले आए ?

आगन्तुक आत्मा, आत्मा क्या ?

तान्त्रिक इतनी जल्दी भूल गए ? (हँस कर) याद करो, तुम यहाँ से एक आत्मा भी ले गये थे ?

आगन्तुक मैं ले गया था यहाँ से ?

तान्त्रिक याद करो, तुम जब इन चट्टानों की गोद में खेलते थे, तो इन चट्टानों ने तुम्हें एक आत्मा दी थी, जो इन्हीं चट्टानों की तरह अटूट और दृढ़ थी, इन्हीं की तरह विराट और निर्लेप थी। इन्हीं की तरह...

आगन्तुक आत्मा, चट्टानों की तरह ?

तान्त्रिक याद करो, जब तुम इस नीली झील के किनारे बैठ कर बाँसुरी बजाया करते थे तो लहरों के साथ नाचती हुई एक परछाईं आती थी और तुम्हारे पैरों के पास शान्त जल में सोई हुई तुम्हारा गीत सुनती थी। वह नीली झील के समान स्वच्छ और गहरी थी, वह झील की सतह पर साँवले कमल की तरह खिलती थी।

आगन्तुक साँवले कमल की तरह ?

तान्त्रिक याद करो, तम इस पेड़ की छाँह में बैठते थे, तो एक आत्मा आशीर्वाद की तरह तुम पर छाई रहती थी। वह इस पेड़ की तरह धरती की गहराइयों से अंकुरित हुई थी। वह सोंधी मिट्टी से जीवन खींचती थी और अंधकार की पर्तें तोड़ती हुई दिन-दिन ऊँचे उठती थी, आकाश की ओर बढ़ती थी, पवित्रता की ओर बढ़ती थी।...

आगन्तुक पवित्रता की ओर ? मुझे कुछ भी याद नहीं आता। मुझे

कुछ भी याद नहीं आता। मैं यहाँ से कोई आत्मा नहीं ले गया।

तान्त्रिक तुम झूठ बोलते हो, तुमने राजदंड से अपनी आत्मा की हत्या कर दी, उसे सोने के मकबरे में दफन कर दिया। तुम्हारे राजदंड पर गाढ़े खून के दाग हैं। तुम्हारे सोने पर मक्खियाँ बैठ रही हैं।

आगन्तुक (चीखकर) मैंने किसी की हत्या नहीं की। तुम झूठ बोलते हो।

तांत्रिक (शान्त) मैं झूठ बोलता हूँ? इधर आओ इस झील के किनारे खड़े होओ। इसमें झुक कर देखो। क्या देख रहे हो?

आगंतुक कुछ नहीं दीख रहा।

तांत्रिक (दूसरे व्यक्ति से) इसके क्या अर्थ हैं?

दूसरा व्यक्ति इससे मालूम होता है यह आदमी अपनी आत्मा कहीं खो आया है।

तान्त्रिक (पहले व्यक्ति से) अपनी बाँसुरी दो इसे। (आगन्तुक से) फूँको इसे (बाँसुरी खामोश) इसके क्या अर्थ हैं?

पहला व्यक्ति इसकी आत्मा मर गई है। इसमें प्राण नहीं, साँस नहीं, संगीत नहीं।

तान्त्रिक ठीक (आगन्तुक आगे बढ़ता है) खबरदार, वहीं खड़े रहो। यह महान व्यक्ति नीली झील की दिग्विजयी सन्तान है। इसकी पीठ पर सोना है और हाथ में राज-दंड और यह आत्माहीन है। (दोनों व्यक्तियों से) दूर रहो, इसकी छाँह जिस पर पड़ेगी उसकी पसलियों के नीचे पंजे निकल आवेंगे, उसके दिमाग में कीड़े रेंगने लगेंगे... (उसके चारो ओर एक वृत्त खींचता है) इसके

आगे मत बढ़ना...मत बढ़ना। (दूसरे व्यक्ति से) जाओ, घाटी में मुनादी करा दो कि कोई बच्चा झील के किनारे खेलने न आए, गृह-वधुएँ द्वार बन्द करलें। किसी पर इस व्यक्ति की छाँह न पड़े। कह दो कि वह नीली झील की गौरवमयी सन्तान है जो २० चन्द्रग्रहणों बाद सोना और राजसत्ता जीत कर आई है, पर अपनी आत्मा की हत्या कर आई है।

आगन्तुक यह झूठ है।

(दूसरा व्यक्ति जाता है, जाते समय लालचभरी निगाह से घूम-घूमकर सोने की ओर देखता है।)

तान्त्रिक झूठा आरोप है। तुमको विश्वास नहीं होता। अच्छा मैं तुम्हें दिखाता हूँ पवित्रता की राजकुमारी हमारी आदि जननी यह नीली झील कभी झूठ नहीं बोलती। (पहिले व्यक्ति से) इधर आओ, झील के किनारे खड़े हो। मन में एक ताजे कमल की कल्पना करो जिसमें एक हजार एक पंखुड़ी हों...(मंत्र-सा पढ़ता है) मैं तुम्हारी आत्मा को तुमसे अलग करता हूँ...मैं तुम्हारी आत्मा को अतीत के अँधियारे देश में भेजता हूँ...मैं तुम्हारी आत्मा को इतिहास के बीते हुए मगर अलिखित अध्यायों में भेजता हूँ। तुम्हारी आत्मा क्या देख रही है?

पहला व्यक्ति नीली झील में काले पहाड़ काँप रहे हैं और उन पर एक घायल हिरणी दौड़ रही है।

तान्त्रिक वह इसकी आत्मा है।

पहला व्यक्ति काले गुलाम एक चट्टान उलट रहे हैं। वह सोना बटोर

रहा है। चट्टान के नीचे एक फूल की झाड़ी कुचल गई है।

तान्त्रिक वह इसकी आत्मा है।

आगन्तुक (भय से चीख कर) यह झूठ है।

पहला व्यक्ति हाथी दाँत की मेज पर एक लड़की सिसक रही है, उसके गोरे अंगों पर गन्दे घाव हैं।

तान्त्रिक वह उसकी आत्मा है।

आगन्तुक यह सब झूठ है।

पहला व्यक्ति फौलाद की भट्ठियाँ एक बच्चे को निगल रही हैं। प्रजाएँ एक दूसरे का गला घोट रही हैं, मैदानों पर खून के धब्बे हैं। एक औरत इसकी बाँहों से छूट कर काली चट्टानों पर भाग रही है। यह उसका पीछा करता है, वह भागती है। नीली झील खून की तरह लाल हो गई है। वह चीख कर उसमें कूद गई है, लहरें उसे निगल रही हैं। वह अथाह रक्त में डूब रही है, डूबती ही जाती है!

तान्त्रिक वह इसकी आत्मा है।

आगन्तुक (घुटनों में सर छिपा लेता है।) सच है, (बहुत मायूस-स्वर में) बिलकुल सच है।

पहला व्यक्ति इसने हत्या की है (सर उठा कर रक्तमय नेत्रों से) आत्मा की, इसने हत्या की है।

दूसरा व्यक्ति लौटता है।

दूसरा व्यक्ति (हवा में किसी का गला घोंटता हुआ) इसे नीली झील में फेंक देना चाहिए। तुमने कभी किसी का गला घोंटा है।

पहला व्यक्ति नहीं, गला घोंटने में भी कोई आनन्द होगा तभी तो इसने...

दौड़ कर आगन्तुक का गला पकड़ता है।

तान्त्रिक दूर रहो, तुम पर इसकी छाया पड़ गई।

दूसरा व्यक्ति मैं इसका सोना लूँगा (सोना लेता है)

पहला व्यक्ति (गला छोड़कर दूसरे व्यक्ति का हाथ पकड़ता है) सोना मैं लूँगा, तुम मोती लो।

दूसरा व्यक्ति सोने पर मेरा हक है।

तान्त्रिक (आगे बढ़ कर) खूँखार भेड़ियो! पीछे हटो! नीली झील में तुम्हारी परछाईं हिल रही है। मैं कहता हूँ, वापस जाओ। वरना मैं आदेश दूँगा और पेड़ की डालें अजगर की तरह तुम्हें मरोड़ देंगी।

(वह आगे-आगे बढ़ता है। दोनों व्यक्ति मंत्रमुग्ध-से पीछे हटते हैं हटते-हटते पहाड़ों के पीछे चले जाते हैं। आगन्तुक उठता है, झील में देखता है और फिर भयभीत होकर मुँह ढँक लेता है। तांत्रिक आकर उसके कंधे पर हाथ रखता है।

आगन्तुक मुझे छुओ मत। मुझे हत्या लगी है। मैंने हत्या की है। उन्हें बुलाओ। वे मुझे चट्टानों से कुचल दें...

तान्त्रिक नहीं मेरे बच्चे, तुम मरोगे नहीं।

आगन्तुक ये चट्टानें मुझसे बदला लेंगी। यह झील मुझसे बदला लेगी। मैं आत्माहीन हूँ!

तान्त्रिक यह झील तुम्हें क्षमा कर देगी। मैं बूढ़ा हूँ। मैं स्वत्वहीन हूँ, निरर्थक हूँ। तुम्हारे पाप मैं अपनी आत्मा पर ले लूँगा। मैं तुम्हारे लिए प्रार्थना करूँगा। (घुटने टेक कर प्रार्थना करता है) ओ अनन्त करुणामयी झील, इसे क्षमा करो। ओ

विराट पहाड़ो, इसने अपनी आत्मा की हत्या कर डाली है। इसके लिये इससे बड़ी सजा और क्या हो सकती है कि यह अपनी आत्मा से वंचित हो गया है। इसे क्षमा कर दो। इसे जीवनदान दो। इसे नई आत्मा दो।

आगन्तुक (सन्देहशील और आश्वस्त मिश्रित भाव से) नई आत्मा ?

तान्त्रिक क्यों नहीं ? तुम मरोगे नहीं। नई आत्मा ढूँढने के लिए जीवित रहोगे।

आगन्तुक मैं ?

तान्त्रिक हाँ तुम ! नई आत्मा ढूँढने के लिए वापस जाओ उसी देश में जहाँ युद्ध हो रहे हैं, जहाँ प्रजाएँ रक्तपात कर रही हैं। जहाँ फौलाद की भठिट्याँ धधक रही हैं। जाओ, उस संघर्ष का अर्थ समझो। अन्धेरे से विद्रोह करो, प्रकाश पर आस्था रक्खो, तुम्हें नई आत्मा मिलेगी।

आगन्तुक सच ?

तान्त्रिक जाओ ! आगे बढ़ो ! (स्टेज की सीढ़ियों की ओर संकेत करते हुए) उतरो, जिन्दगी में उतरो (आगन्तुक दोनों बाँहें फैलाए हुए आँख खोले हुए अन्धों जैसा टटोलता हुआ आगे बढ़ता है) तुम अंधकार में हो। तुम प्रकाश की ओर बढ़ रहे हो (दर्शकों तक पहुँच जाता है) डरो मत, घबराओ मत। आस्था से विचलित मत होओ। लोगों में ढूँढ़ो, जनता को छूओ, जिन्दगी में उतरो। तुम्हें नई आत्मा मिलेगी। साहस मत खोओ। तुम लौट कर आओगे तो झील पर तुम्हारी परछाईं पूनम के चाँद की तरह तैरेगी। चट्टानें बाँहें फैलाकर तुम्हारा स्वागत करेंगी। (दर्शकों की ओर देखकर) वह तुम्हारे बीच में डोल रहा है। वह आत्माहीन छाया तुम्हें छू रही है, लेकिन

घबराओ मत ! वह अपनी आत्मा ढूँढ़ रहा है । उसे सहारा दो। उसकी मदद करो (धीरे-धीरे पीछे का पर्दा गिरता है । आगन्तुक धीरे-धीरे स्टेज पर लौट आता है) मैं तो बूढ़ा हूँ । मैं नहीं रहूँगा । ये पहाड़ टूट गिरेंगे। वह झील सूख जायगी। यह पेड़ उजड़ जायेंगे। यह झूठ था—नीली झील, यह घाटी इसके लोग—यह सब मेरी कल्पना थी, मेरा इन्द्रजाल था। असल था, सत्य था केवल वह जो दोनों बाँहें फैलाये अपनी आत्मा ढूँढ रहा है। वह हमारे और तुम्हारे माध्यम से आवेगा। भविष्य की दुनिया उसकी होगी । तब न मैं रहूँगा, न मेरा इन्द्रजाल। न तुम, न तुम्हारी कला। रहेगा सिर्फ वह जो आज अपनी नई आत्मा ढूँढ रहा है···वह तुम्हारे व्यक्तित्व को छुयेगा, तुम्हारी आत्मा में उतरेगा। क्योंकि तुम्हारे व्यक्तित्व और तुम्हारी आत्मा में उस आत्माहीन को नई आत्मा मिलेगी और वही सत्य होगी। मेरी ओर मत देखो। यह नीली झील और उसका तान्त्रिक मैं, केवल इन्द्रजाल थे। यह झूठा खेल था जो अब खत्म होता है।

एक ओर तान्त्रिक और दूसरी ओर आगन्तुक जाता है।

सामने का पर्दा भी गिर जाता है।

आवाज़ का नीलाम

पात्र

दिवाकर—एक पत्रकार

बाजोरिया—एक सेठ

घटना-काल : १९४७ में स्वतंत्रता मिलने के बाद

'आवाज़' सम्पादक दिवाकर का कमरा। एक तरफ एक तख्त। बड़ी-सी मेज़ पर अखबार, कागज, सोख्ता, पिन कुशन, ऐश ट्रे, टेबल कैलेन्डर वगैरह बहुत अस्तव्यस्त हालत में। कागज बिखरे हैं, पेपर-वेट ऐश ट्रे पर रक्खा है, पिन कुशन खाली है, पिनें मेज पर पड़ी हैं, सिगरेट की राख पिन कुशन के पास इकट्ठा है। बगल में एक तिपाई पर टेलीफोन रक्खा है।

मेज के पीछे दीवार पर सुभाष बोस का बहुत भव्य चित्र लगा है, जो गर्द और मैल से धुँधला पड़ गया है। तस्वीर के नीचे ही दीवार में साप्ताहिक 'आवाज' की फाइल टँगी है। एक दूसरी कील पर दिवाकर का कोट।

मेज पर पैर फैलाए हुए दिवाकर अपनी कुर्सी पर बैठा है। मैला पैंट, कमीज के बटन खुले हुए, सिगरेट ऐश-ट्रे के सहारे रक्खी हुई सुलग रही है। बाल बिखरे हुए, कालर अस्तव्यस्त, सिर कुर्सी की पीठ पर टिका हुआ, आँखें छत पर टिकी हुईं, सूनी-सूनी विचित्र सी मुद्रा। सामने ही एक छोटा सा जापानी ट्वाय पियानो रक्खा है जिसे वह अपने फाउन्टेनटेन पेन से टुनटुना रहा है! लम्बी-लम्बी गहरी साँसें, उचटा-उचटा हुआ-सा अमंगल-सा वातावरण। सहसा टेलीफोन की घंटी बज उठती है। वह चोंगा हाथ में उठा लेता है:

दिवाकर हलो......कौन, बाजोरिया जी......हाँ यहीं हूँ।... नहीं अस्पताल नहीं गया, आपरेशन तो सुबह हुआ था... जी, जब मैं आया तब तो वाइफ को नींद आ गई थी...... हाँ आज भर खतरा है... देखें क्या होता है...हाँ, आप

आइए... हाँ, हाँ, कोई बात नहीं... अच्छा अच्छा... मैं यहीं हूँ, बड़ी कृपा। (टेलीफोन रख देता है, दाँत पीस कर टेलीफोन की ओर देखता हुआ) कृपा! बेईमान, कमीना मैं खूब समझता हूँ तुम्हारी कृपा। आज १० साल से जब मैंने अपनी एक-एक हड्डी जलाकर अखबार निकाला, सरकार से लड़ा, सेठों से लड़ा, ज़मानतें दीं, घर बिक गया, बीबी सूखकर कंकाल हो गई, तब किसी ने दया नहीं दिखाई। मैंने किसी के सामने सिर झुकाना जो नहीं सीखा था। आज जब अखबार बेच रहा हूँ तो दिन में तीन-तीन मर्तबा टेलीफोन से हाल पूछा जाता है। कितनी चिन्ता है सेठ बाजोरिया को? पाँच मिनट में आ रहे हैं, (गहरी साँस लेकर) ५ मिनट! (पेन से पियानो के पर्दे झंकारता है और गिनता जाता है—) एक...दो...तीन...चार... पाँच मिनट (उठकर दीवार पर से 'आवाज' की फाइल उतारता है। उसे बच्चों की तरह गोद में लेकर टहलता है।) बस पाँच दस मिनट और! उसके बाद तुम मेरे नहीं रहोगे। मैं दस्तख़त कर दूँगा और तुम बिक जाओगे। कितनी साध से मैंने तुम्हें निकाला था, कितनी लगन से, कितनी मुसीबतें झेल कर तुम्हें चलाया था। याद है तुम्हें! जब तुम्हारा विशेषांक निकल रहा था और शीला सीढ़ी पर से गिर पड़ी थी, लेकिन मैं उसके पास नहीं था। याद है जब शीला की दवा के रुपये से मैंने सत्तार प्रेस वाला टाइप खरीद लिया था। मैं तुम्हारे लिए सब कुछ भूल गया था, अपने को, अपनी फूलों जैसी बच्ची को, अपनी शीला को, महज़ इसलिए कि तुम मेरी आत्मा की आवाज़ बन सको, मेरी नंगी भूखी जनता की आवाज़ बन सको। सत्य की आवाज़ बन सको। लेकिन

नहीं......अब तुम बाजोरिया की आवाज़ बनोगे। (आवेश से) तुम्हारा नीलाम होगा। (नीलाम करने वालों की सी आवाज़ में) आवाज़, आवाज़ जनता की आवाज़, आत्मा की आवाज़, सच्चाई की आवाज़। नीलामी बोली ६ आना, साढ़े ६ आना, साढ़े ६ आना एक..... साढ़े ६ आना दो—(पियानो पर ठुनकी मारता है) साढ़े ६ आना तीन! (कुर्सी पर धम्म से बैठ जाता है, गिर सा पड़ता है। दो क्षण की खामोशी। फिर एक अजब-सी हँसी, लुटी-लुटी हुई सी... सहसा फोन की घंटी बजती है। साथ ही बाहर मोटर के आने की, हार्न की और मोटर के फाटक बन्द होने की आवाज। वह फोन उठाता है—) हलो... मैं हूँ दिवाकर, कहिए... हाँ...हाँ, अच्छा शीला जाग गई है ?... मुझे बुला रही है... ठीक, मैं अभी आया...हालत ठीक नहीं है ?...कोई खतरा नहीं... तब ठीक है।...अच्छा, कोई बात हो तो फोन करना ?......

इसी बीच में सेठ बाजोरिया आते हैं। खद्दरधारी, बहुत स्थूलकाय नहीं। चेहरे पर शालीनता। आते ही पूछते हैं, 'कहिए मिस्टर दिवाकर!' फिर दिवाकर को फोन करते हुए देखकर 'ओह' कहकर रुक जाते हैं, दिवाकर के संकेत करने पर बैठ जाते हैं।

बाजोरिया (दिवाकर के फोन कर चुकने पर) क्या हाल है वाइफ का ?

दिवाकर एक अजब से तीखे गुस्से और नपुंसक लाचारी से उसकी ओर देखता है, फिर एक अजब-सी हँसी हँस कर बैठ जाता है। कुछ जवाब नहीं देता। सिर झुकाकर बैठ जाता है और पेन से पियानो को झंकारने लग जाता है।

बाजोरिया (और आगे कुर्सी खिसकाकर, चेहरे पर बहुत आत्मीयता लाकर, स्वर में बहुत सहानुभूति भरकर—) क्या बात है दिवाकर जी ? सम थिंग सीरियस ?

दिवाकर कोई बात नहीं है सेठ जी ! (गहरी साँस लेकर) बात क्या होती। मेरी कुछ अजब सी आदत है। जब मन बहुत परेशान होता है तो यह पियानो बजाने लगता हूँ। जाने क्यों. . .लेकिन . . .आप भी सोचते होंगे. . .

बाजोरिया (कुछ मुस्करा कर) नहीं, नहीं, नर्वस टेन्शन में अक्सर ऐसा होता है। लेकिन यह बच्चों का पियानो ? (हँसता है, दिवाकर भी हँसता है।)

दिवाकर (पियानो हटा कर) क्या बताऊँ ? अखबार की दुनिया में रोज खबरें आती हैं। हड़तालों के नारे, लड़ाइयों का शोर-गुल, सेनाओं की परेडें, जंगी जहाजों का घर्राटा लेकिन मुझे सब इतने बेमानी, इतने खोखले लगते हैं जितने इस बचकाने खिलौने के स्वर। लेकिन कभी-कभी लगता है इन्हीं ध्वंस और विनाश की आवाजों में कहीं नये इन्सान की आवाज का भी निर्माण हो रहा है। मैंने सोचा उस आवाज़ को जिन्दा रखने के लिए, उसे ऊपर लाने के लिए मैं अपनी हस्ती को मिटा दूँगा, वही आवाज़ मेरी जिन्दगी होगी। इसीलिये. . .

बाजोरिया शायद इसीलिये आपने अपने अख़बार का नाम 'आवाज़' रक्खा था।

दिवाकर जी हाँ ! और इस आवाज के लिए अपने को बर्बाद कर दिया था, लेकिन जनता नए इन्सान की आवाज नहीं सुनना चाहती। उसे सच्चाई की आवाज नहीं चाहिए। उसे चाहिए शोख कवर, भड़कीले चित्र, रंग-बिरंगे विशेषांक. . .वह सब जो उसे सेठ बाजोरिया के अखबार में मिलता है।

बाजोरिया देखिए ! यह पर्सनल रिमार्क आपको शोभा नहीं देता दिवाकर जी, आप मुझे बिल्कुल गलत समझ रहे हैं। मेरा कतई यह इरादा नहीं कि मैं जनता को गुमराह करूँ। बात यह है दिवाकर जी, कि मुझे साहित्य और पत्रकारिता से कुछ इतना लगाव है कि दिन-रात मैं सोचता हूँ कि हमारे यहाँ भी अमरीका की तरह सजे-सजाए अखबार निकलें, सस्ते से सस्ते, सुन्दर से सुन्दर। ज्यादा से ज्यादा जनता उन्हें पढ़े। उसका सांस्कृतिक स्तर ऊँचा हो।

दिवाकर सांस्कृतिक स्तर ऊँचा हो। (व्यंय से हँसकर) इधर तमाम लोगों को सांस्कृतिक स्तर सुधारने की बीमारी लगी है। कोई 'टाइम्स' खरीद रहा है, तो कोई 'लाइमलाइट'! आप....

बाजोरिया (बात काट कर) मैं भी 'आवाज़' खरीद कर वही करना चाहता हूँ, यही मतलब है न आपका ? (कड़े स्वर में) मिस्टर दिवाकर ! दुनिया भी कितनी स्वार्थी होती है। कितनी अहसान फरामोश होती है। (उठकर टहलने लगता है) आपको जरूरत थी, आपने सन्देशा कहलाया था, आप इस वक्त मदद चाहते थे। और जब मैं 'आवाज़' के शेयर खरीदने के लिए राजी हो गया तो आप इस तरह चोटें कर रहे हैं। (मुड़कर, खड़े होकर) शायद आप समझ नहीं रहे हैं कि आप अपने पैरों में कुल्हाड़ी मार रहे हैं।

दिवाकर (सुस्त पड़कर, पियानो पर सिर रखकर) भूल गया था मैं। गरजमन्द मैं हूँ, आप तो ग्राहक हैं। आपकी तो चार बात.....

बाजोरिया (मेज पर झुककर बड़े मुलायम स्वरों में) नहीं नहीं, मेरा यह मतलब....

दिवाकर नहीं, मैं समझता हूँ। महीने भर से मेरी पत्नी की बीमारी पर आपने पानी की तरह रुपया बहाया है....

बाजोरिया (कुर्सी पर बैठ कर) छीः छीः दिवाकर जी ! ऐसी बातें कहकर ज़लील न कीजिए। (बहुत स्नेह से उसका हाथ अपने हाथ में लेकर) यह मैंने आप पर अहसान नहीं किया है। आपने अपनी जिन्दगी में जितना त्याग किया है, जितनी साधना की है, उसके लिए हमारे दिल में कितनी श्रद्धा है, यह आप समझ भी नहीं सकते।

दिवाकर (पियानो टुनकारते हुए) अच्छा है मैं न समझ सकूँ, बाजोरिया जी। अब साधना और तपस्या के दिन भी तो नहीं रह गए। अब कलम की शान और विचारक की आजादी का भी तो कोई अर्थ नहीं रहा। अब तो अगर मैं आपके पत्र में हूँ तो आपका ढोल बजाऊँ, उसके पत्र में हूँ तो. . . .

बाजोरिया (थोड़ा अप्रतिभ हो जाता है) मैं और लोगों की बात नहीं जानता, लेकिन जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, कम से कम आपसे मैं इस तरह की बात सुनने की उम्मीद नहीं करता था। पाँच अखबार हैं मेरे। क्या आप बता सकते हैं कि मैंने किसी के सम्पादक पर कभी कोई प्रतिबन्ध लगाया है ?

दिवाकर (ठण्डे फौलाद के से स्वर में) बाजोरिया जी, किसी आदमी का सबसे बड़ा गुनाह यह है कि वह दूसरे आदमी को अपने बारे में सच बोलने के लिए मजबूर कर दे।

बाजोरिया (भौंह सिकोड़ कर) क्या मतलब ?

दिवाकर क्या मतलब . . . . (तैश से) क्या आप कह सकते हैं कि आपने प्रतिबन्ध नहीं लगाया है ? चैटर्जी ने उस दिन गृहमन्त्री के वक्तव्य पर टिप्पणी लिखी थी। उस पर किसने चैटर्जी को कमरे में बुलाकर डाँटा था ?

बाजोरिया (तैश में मेज पर हाथ पटक कर) यह गलत बात है।

दिवाकर यह सही बात है। आप जानते हैं, जब चैटर्जी को ६० रुपए

मिलते थे तब वह सम्पादकीय लिखता था, आज जब आप उसे ढाई सौ दे रहे हैं तब वह डिक्टेशन लिखता है। आपका डिक्टेशन, जिसने अपनी जिन्दगी में सिवा बही खाते के कुछ भी न लिखा होगा......

बाजोरिया लेकिन......

दिवाकर लेकिन क्या ? आप मालिक हैं, आप उसे डाँट सकते हैं, उसे जिसके बाल अखबार नवीसी में सफेद हो चुके हैं।

बाजोरिया (दोनों मुट्ठियाँ बाँधकर, बड़ी खीज से) मुझे अफसोस है, मिस्टर दिवाकर, कि आप भी अधकचरे साम्यवादियों की तरह बातें करने लगे हैं। हर चीज को एक ही पहलू से आप क्यों देखते हैं ? अगर मैंने चैटर्जी को डाँटा भी तो उसमें कोई पूँजीवादी राजनीति तो नहीं थी ।

दिवाकर (बड़े तीखे व्यंग से) नहीं जी, उसमें तो गांधीवादी अध्यात्म था !

बाजोरिया दिवाकर जी, (उठकर टहलने लगता है) उसमें गांधीवादी अध्यात्म नहीं, लेकिन कम से कम वैयक्तिक सम्बन्धों की बात तो जरूर है। गृह-मंत्री मेरे मित्र हैं। क्या आप चाहेंगे कि आपके पत्र में आपके मित्रों की बुराई निकले ?

दिवाकर ओपफोह ! आज गृह-मन्त्री आपके मित्र हैं...लेकिन सन् ४२ में गृह-मन्त्री आपके मित्र नहीं थे जब पुलिस उन्हें हथकड़ियाँ पहनाकर आपके दरवाजे से ले गई थी ! उस दिन आप उनसे दौड़कर गले नहीं मिले थे......उस दिन तो आप मिलीटरी के लिए ठीके ले रहे थे और आपके अखबार अँग्रेजी सरकार का विज्ञापन छाप रहे थे कि कांग्रेसवाले गुन्डे हैं। कम से कम चैटर्जी ने गृह-मन्त्री को गुन्डा तो नहीं लिखा था।

बाजोरिया (टहलते-टहलते) चैटर्जी की बात जाने दीजिए, दिवाकर जी, उसके साथ सैकड़ों बातें हैं। असलीयत समझना दूसरी बात है, व्यंग करना दूसरी बात। अगर आपका कोई अखबार होता...

दिवाकर गोया यह आपका अखबार है !

(टेलीफोन की घन्टी बोलती है।)

बाजोरिया ओह माफ कीजिएगा; मैं भूल गया था।

दिवाकर नहीं, नहीं मैं भूल गया था बाजोरिया जी। (टेलीफोन की घंटी) मैंने आपको बुलाया था कि आज अखबार बेच ही दूँगा। लेकिन नहीं, भीख माँग कर अखबार निकालूँगा, फर्नीचर बेचकर अखबार निकालूँगा, अपने खून से छापूँगा, लेकिन आपके हाथ नहीं बेचूँगा। (टेलीफोन की घन्टी, तैश में रिसीवर उठाकर फिर पटक देता है।) नहीं बेचूँगा। मैं आपका रुपया एक-एक पाई चुका दूँगा... (फिर टेलीफोन की घन्टी)

बाजोरिया (बात काट कर) दिवाकर जी, आप मुझे गलत समझ रहे हैं।

दिवाकर मैं खूब समझने लगा हूँ आप लोगों को ! (फिर टेलीफोन की लम्बी रिंग, झल्ला कर उठाता है। हाथ से ठोकर लग कर पियानो गिर जाता है।) उफ, ये भी कम्बख्त आफत है। (जोर से झल्ला कर) जी हाँ...जी हाँ...कह तो दिया, जी हाँ.... (कड़ुवे स्वर से) क्या ?......(सहसा मुखमुद्रा एकदम बदल जाती है) नाड़ी डूब रही है......(बहुत भयभीत स्वर में) बहुत खतरा है...(व्यग्र स्वर में) कै फायल लेता आऊँ...तीन इन्जेक्शन ? मैं अभी लेकर आया...किसी तरह बचाइए उसे डाक्टर साहब......सुनिए, सुनिए......(निराश होकर फोन रख देता है—कुछ सोचते हुए) तीन फायल...उन्तालीस

रुपया और एक सौ पचीस हु...आ...एक सौ चौवन...नहीं एक सौ चौंसठ ।

बाजोरिया (पास आकर) कैसी हालत है वाइफ की दिवाकर जी ?

दिवाकर (बिना सुने हुए, उसी धुन में) मेरे पास कुल हैं (खड़े होकर, जेब में हाथ डालकर) अरे कहाँ गए रुपये ? (सारी मेज छान डालता है, फिर घड़ी देखता है, फिर ड्राअर में देखता है। फिर बिलकुल स्तब्ध-सा खड़ा हो जाता है।)

बाजोरिया आप परेशान क्यों हैं। (जेब से नोटों का बन्डल निकालता है, दिवाकर उधर ध्यान ही नहीं देता, स्तब्ध खड़ा है, फिर दाँत पीसकर माथा ठोंकता है।)

बाजोरिया दिवाकर जी आप क्या कर रहे हैं। लीजिए ये हैं रुपए, बाहर कार खड़ी है। (कन्धे पर हाथ रखकर) चलिए, जल्दी अस्पताल चलें।

दिवाकर बिलकुल पत्थर की तरह खड़ा रहता है। जैसे वह संज्ञाशून्य हो, चेतनाहत हो, फिर मुड़कर कोट उतार कर पहनता है, फिर सेठ जी की ओर बड़ी कातर निगाहों से देखता हुआ, जैसे अभी रो देगा...

दिवाकर हालत......उसकी हालत ठीक नहीं सेठ जी.......

बाजोरिया (घड़ी देखकर) जल्दी कीजिए।

दिवाकर (पास आकर, बहुत पास आकर, सेठजी के दोनों कन्धों पर हाथ रख कर) आप देवता हैं, आप देवता हैं सेठ जी! मैं पागल हूँ, मैं पागल हो गया था। अखबार आपका है। पहले मैं कागजों पर दस्तखत कर दूँ।

बाजोरिया छि: ! आप कैसी बात करते हैं। मैं अखबार नहीं.....

दिवाकर (बात काटकर, चीखकर) मैं तो अखबार बेचूँगा। आपने

कितना किया है मेरे लिए। आपने शीला की जान बचाई है, और मैं आप पर अविश्वास करता हूँ। (चीखते और दाँत पीसते हुए) मैं अहसान-फरामोश नहीं हूँ, लाइए कागज लाइए। (बाजोरिया कागज निकालकर देता है। दिवाकर बैठ जाता है। कागज खोलकर देखता है, फिर दस्तखत करता है। आवेश कुछ शान्त-सा पड़ गया है। एक निगाह उठाकर बाजोरिया की ओर देखता है, फिर बड़ी दर्द-भरी मुस्कराहट...........)

दिवाकर (हाथ उस स्थान पर बढ़ाते हुए जहाँ पियानो रक्खा था) दूसरा कागज ? (पेन से टुन्कारता है, पर पियानो न पाकर कहता है—) अरे मेरा पियानो कहाँ गया ? (बाजोरिया उधर इशारा करता है, झुक कर नीचे देखता है, फिर हँसकर) डैम इट, कहाँ है दूसरा कागज ? (पैर से पियानो को ठुकरा देता है। बाजोरिया दूसरा कागज देता है, दिवाकर दस्तखत करता है। फोन की घन्टी बजती है। दिवाकर दस्तखत करके कागज फिर पढ़ता है। फोन की घन्टी फिर बजती है। वह कागज मेज पर रख देता है। रिसीवर उठाता है। बाजोरिया कागज उठाकर अपने हाथ में लेकर पढ़ने लगता है—)

दिवाकर (फोन पर) हलो......हाँ हाँ, कहिए न,....मैं ही हूँ....माई गाड ! (टेलीफोन पटककर उछल पड़ता है। बहुत ही उल्लास से—) बाजोरिया ! बाजोरिया जी, कितना दयावान है ईश्वर ! कैसे मौके पर बाँह पकड़ता है। मेरी मुसीबतें खत्म हो गई दोस्त ! मैं अब 'आवाज' नहीं बेचूँगा। (दाँत पीसकर) माई वाइफ इज डेड !

बाजोरिया क्या कह रहे हैं आप।

दिवाकर (ऊँचे गले से) मैं सच कह रहा हूँ, बाजोरिया जी। अभी

उसका हार्टफेल हो गया। (गहरी साँस लेकर) अब 'आवाज़' बेचने की जरूरत नहीं।

बाजोरिया आप पागल हो गए हैं। वह तो आप बेच चुके, बैनामा मेरे पास है। चलिए जल्दी अस्पताल।

दिवाकर (झट से मुड़कर मेज की ओर देखता है) कहाँ गए कागजात? लाओ उन्हें। मैं नहीं बेचूँगा। शीला की कसम, मैं नहीं बेचूँगा।

बाजोरिया (उन्हें जेब में रखकर) आप पागल हो गए हैं।

दिवाकर (चीखकर) हाँ। पागल हो गया हूँ। (पियानो जैसे मारने के लिए उठाकर) सीधे से दे दो वरना—(खींचकर फेंकता है।)

बाजोरिया भयभीत होकर पीछे उछल जाता है, पियानो अलग जा गिरता है।

बाजोरिया आप पागल.....(दर्वाजे की ओर भागता है, दिवाकर भी—)

दिवाकर (और चीखकर) हाँ मैं पागल हूँ (भागता है, चीखता हुआ) मेरे कागज दे दो, मैं 'आवाज' नहीं बेचूँगा.....(नेपथ्य में मोटर के फाटक बन्द होने की और कार स्टार्ट होने की आवाज—)

पर्दा गिरता है

संगमरमर पर एक रात

पात्र

मेहरुन्निसा

लाडली

जहाँगीर

शेर अफ़गन

बाँदी

घटना-काल : जहांगीर का राज्य-काल

दृश्य १

आगरे के किले का एक हिस्सा। लाल पत्थरों की छत, सामने की ओर बीचोबीच एक संगमरमर की गोल फूलकारी का आधा हिस्सा जिसके समानान्तर अर्द्ध वृत्ताकार ३ संगमरमर की चौकियाँ पड़ी हैं। स्टेज पर बाँईं ओर मेहराबें और खम्भे, पीछे से दाँईं ओर आधी दूर तक एक लम्बी जाली की नकाशी हुई दीवार, दाँईं ओर आगे एक गोल मुंडेर और बारजा।

स्टेज पर बहुत धुँधला प्रकाश। चौकियों पर कालीन बिछे हैं। एक चौकी खाली है। बाँदी आती है। जाली की दीवार के अन्दर से खाली चौकी पर आइना, पानदान, कस्तूरी, चाँदी की सुराही और कटोरियाँ रख जाती है। मुड़ेर के पास एक कमरबन्द और एक तलवार रक्खी है। जाते समय उसे देख कर रुक जाती है। फिर अन्दर चली जाती है।

बाँईं ओर से आवाज आती है--"लाडली !" धीरे-धीरे मेहरुन्निसा प्रवेश करती है। ३० वर्ष की परिपक्व, गंभीर, प्रौढ़ सुन्दरी। चाल में भराव जैसे भादों की जमुना। आँखों में तरल उदासी जो इस बात का चिन्ह है कि जिन्दगी में इस औरत ने बहुत कुछ खोया है, बहुत कुछ पाया है। आवाज में ललकार के साथ थकावट जैसे उसमें अब भी जिन्दगी को चुनौती दे सकने की ताकत हो पर सोचती हो कि जिन्दगी से लड़ना बेकार है। कौन जीत पाया है उससे ? फिर भी एक आन है कि लड़ती ही जाती है। जब चुनौती स्वीकार कर ली तो पीछे हटना क्या ?

'लाडली'। एक बार फिर पुकारती है और चारों ओर देखती है। देखने की चेष्टा से प्रतीत होता है जैसे उसकी नजर धुँधली पड़ गयी है। इसीलिए उसे वे तलवार और कमरबन्द नहीं दीख पड़ते जो उसी मुंडेर से टिके हुए रक्खे हैं जिसके पास जाकर वह अनमनी खड़ी हो जाती है।

बाँदी आती है। पास जाकर खड़ी हो जाती है। मेहरुन्निसा एकटक नीचे देख रही है। बाँदी अँगुलियाँ चटकाती है। मेहरुन्निसा मुड़ कर देखती है।

बाँदी क्या देख रही हैं बेगम ?

मेहर कुछ नहीं (फीकी हँसी हँसकर) कसीदा करते-करते अँगुलियाँ थक गयीं। इधर चली आई। (पल्ले से आँखें पोंछती हुई) अब तो आँखों में पानी आने लगा।

बाँदी हुजूर कुछ दिनों के लिये कसीदा बन्द क्यों नहीं कर देतीं। पर आप को न जाने क्या धुन है कि दिन-रात सुई लिए बैठी रहती हैं।

मेहर बठूँ न तो क्या करूँ ? कसीदा न करूँ तो खाऊँ कहाँ से। लेकिन सोचती हूँ किसी दिन अन्धी हो गयी तो मेरी लाडली का क्या होगा ?

बाँदी अन्धे हों आप के दुश्मन। आप जाने क्यों अपने को तकलीफ देने पर तुली हुई हैं। बादशाह सलामत ने आपको गुजारा अता किया पर वह आपको कबूल नहीं हुआ। वे हैं कि हमेशा आपकी सेहत के बारे में पूछते हैं, आप हैं कि...

मेहर (तन कर, निगाह तरेर कर, चोट खाए स्वर में) तुझसे कै मर्तबा कहा है कि...

बाँदी (सिर झुका कर) गलती हुई हुजूर।

मेहर (कड़े स्वर में) कह देना बादशाह सलामत से मैं (शेर पर

जोर देते हुए) शेर अफ़गन की बेवा हूँ। गरीब की लड़की हूँ। तीन साल से मेहनत-मजदूरी करके पेट भरती हूँ। (आवेश में टहलने लगती है। बाँदी अदब से पीछे-पीछे)

बाँदी कौन नहीं जानता सरकार। आप के कसीदे तो ईरान और रूम के हरम की सजावट बन गये हैं। हिन्दोस्तान की तो बात ही जाने दीजिए।

मेहर (बात अनसुनी करके) गरीब की भी इज्जत होती है...हिन्द के सुल्तान को उसकी भी कद्र करनी चाहिए।

बाँदी बिल्कुल हुजूर, बिल्कुल (आश्वस्त और उत्साहित होकर) मैं तो हुजूर से कहने ही वाली थी। वे खुद नई बुन्देला बेगम के लिये कुछ दुपट्टों पर कसीदा कराया चाहते हैं। एलची के हाथ कुछ सामान बगदाद भी भेजना चाहते हैं। आज शायद वे हुजूर के महलों की ओर खुद...

मेहर (पीछे मुड़ कर) सीधी सादी बात किया कर। (व्यंग से) हुजूर के महलों की ओर। (ठंडी साँस लेकर) मेरे महल तो मेरे मालिक के साथ चले गये। ये जहाँगीर के महल हैं। (चारों ओर देखकर जैसे भूली बात याद आ गयी हो।) लाडली कहाँ है ?

बाँदी लाडली (याद करने का नाट्य करते हुए) ला...ड...ली।

मेहर तेरा तो दिमाग खराब हो गया। (एक चौकी पर बैठती है, फिर फौरन उठ जाती है।) ये कालीन फिर बिछा दिये तूने। (कालीन उतार कर फेंक देती है) तुझसे कै मर्तबा कहा कि मुझे पत्थर पर बैठना अच्छा लगता है।

बाँदी लेकिन सरकार, ठंडक पड़ने लगी है। पत्थर ओस छोड़ने लगे हैं।

मेहर मुझे ठंडे पत्थर अच्छे लगते हैं। (चौकियों पर हाथ फेरती है, जैसे फूलों की ढेरी पर हाथ फेर रही हो।)

बाँदी (संकोच से) और फिर कालीन इसलिये डाल दिये थे कि जहाँपनाह आने वाले हैं।

मेहर जहाँपनाह पर जोर मत दे। एक बेवा कसीदावाली के यहाँ कसीदे का ग्राहक आयेगा बस। (बाँदी चुपचाप चली जाती है। मेहर पत्थर की मसनद पर माथा रख देती है। गहरी साँस लेकर) कितनी राहत मिलती है इन पत्थरों पर सर रख कर।

जाली के पीछे से कुछ फुसफुसाहट होती है। मेहर चौंक कर तन कर बैठ जाती है। फुसफुसाहट बढ़ती है। वह मुड़कर देखती है। आवाज बन्द हो जाती है। बाँदी हाथ में मोमबत्तियाँ लिए हुए आती है। मोमबत्तियों की हलकी रोशनी में मुँडेर के पास कोई उतरता दीख पड़ता है।

बाँदी आँखों को उज्र न हो तो फ़ानूस रोशन कर दूँ।

मेहर (सिर हिला कर हामी भरती है) जाली में कौन है ?

बाँदी घबराकर कोई तो नहीं हुजूर।

मेहर (उठकर जाली के सामने वाली चौकी पर बैठ जाती है।) पता नहीं क्यों यह चौकी हमेशा गरम रहती है। जैसे कोई इस पर बैठा रहा हो और अभी-अभी उठ गया हो।

बाँदी लेकिन हुजूर इस पर कोई नहीं बैठता।

मेहर तो पत्थर खराब होगा।

फिर आहट आती है। मेहर दासी की ओर देखती है। दासी कुछ कहना चाहती है कि मेहर होठ पर हाथ रखकर चुप रहने का इशारा करती है। मुड़कर एक मेहराब के पीछे खड़ी हो जाती, है, बाँदी भी। किसी के कूदने की आवाज आती है। जाली के पीछे से लाडली

निकलती है। खोयी-खोयी सी अस्तव्यस्त, पल्ला सर से खसका हुआ। बालों की लटें माथे पर झूम आयी हैं। रूप-रंग में मेहरुन्निसा की बीस साल पहले की तस्वीर। छत पर किसी को नहीं देखती। तलवार के पास रुक कर 'अरे, तलवार भूल गये।' फिर दौड़कर जाली के अन्दर जाती है। घोड़े की टापों की आवाज सुन पड़ती है। स्टेज खाली।

मेहर बाहर आती है। आँखों पर हाथ कर इधर देखने की कोशिश करती है।

मेहर आँखें धोखा दे रही हैं। दीख नहीं पड़ता। कोई शाहजादा था, कुल्लाह गवाही दे रहा है। कौन है यह?

बाँदी खामोश। लाडली को लौटते देख फिर छिपती है। लाडली तलवार को छाती से लगा कर कहती है, 'चले गये। जब तुम्हें भूल गये तो मुझे क्या याद रक्खेंगे। छोड़ कर चल देंगे एक दिन।' और तलवार को चूम कर फिर छाती से चिपका लेती है। बाँदी उसका ध्यान आकर्षित करने के लिए मेहरुन्निसा की निगाह बचाकर इशारे करती है पर लाडली अपनी धुन में डूबी है।

मेहर कौन था वह?

बाँदी मेरे तो हाथ-पाँव फूल रहे हैं। पता नहीं कौन पापी था सरकार? उसका सर उतरवा लेना चाहिये।

मेहर हूँ सर तो तेरा उतरेगा। बोल कौन था? परवेज था? शहरयार था? कौन था?

बाँदी हुजूर जान बख्शी जाय।

मेहर बोल।

बाँदी शाहजादे परवेज थे।

मेहर तो सुल्तान की निगाह बेवा पर है और शाहजादे की नजर उसकी बेटी पर ? बुलाओ लाडली को। ले आये उसकी तलवार। कर दे मेरे टुकड़े।

बाँदी हुजूर बच्ची है। नासमझ है।

मेहर मैं भी नासमझ थी। जिन्दगी सब कुछ माफ कर देती है, नासमझी माफ नहीं कर पाती। मुझे यह भी देखना बदा था अपनी आँखों से। और तू——तेरी तो खाल खिंचवा लूँगी।

बाँदी हुजूर मैं तो दाँतों तले की जीभ हूँ।

मेहर कुछ नहीं कहती। आग्नेय नेत्रों से जाली की ओर देख कर धीरे-धीरे उधर ही चली जाती है जिधर से आयी थी। दासी कालीनों को एक ओर समेटती है। इतने में लाडली आती है। ओढ़नी बदल कर आयी है। आते ही दर्पण देखती है, फिर बाँदी की ओर——

लाडली बोलती क्यों नहीं। चुप क्यों है ? क्या मैं अच्छी नहीं लगती। तेरा भाई बीमार था ?

बाँदी जी हुजूर।

लाडली ले यह अशर्फी। दरगाह के हकीम से इलाज करवा लीजिओ। चल मेरी चोटी कर दे। नहीं, माँ से करवाऊँगी। माँ अभी तक कसीदा कर रही हैं ? आई नहीं ?

बाँदी आई थीं हुजूर।

लाडली आई थीं ! कब ? (स्वर बदल जाता है।)

बाँदी जब शाहजादे हरम में थे।

लाडली ऐं। उन्होंने देखा तो नहीं।

बाँदी नहीं सरकार। मैंने उधर जाने ही नहीं दिया। पर उन्हें कुछ शक हो गया।

लाडली तूने कुछ बताया ?

बाँदी मैंने ! जबान खिंचवा ले कोई पर आवाज नहीं निकलेगी मुँह से जीते जी।

लाडली (लापरवाही से) ऊँह। मैं खुद आज कह दूँगी उनसे। मैं आज बहुत खुश हूँ। बहुत खुश। मुझसे उन्होंने साफ-साफ कहा——नही मैं तुझे क्यों बताऊँ ? पूछ रहे थे तुम्हारी माँ मुझे माफ कर देंगी। मैंने कहा, क्यों नहीं ? माँ माफ कर देंगी न ? माँ मेरी बहुत अच्छी हैं। क्यों ?

बाँदी जी सरकार !

लाडली बस, 'जी सरकार', 'हाँ हुजूर' जैसे तूने और कुछ सीखा ही नहीं। जा सितार उठा ला। (बाँदी अन्दर जाती है। लाडली फिर गौर से दर्पण देखती है। पता नहीं किस बात का खयाल कर दर्पण की ओर देख कर कहती है 'हटो' और लजा कर हाथ से दरपण ढँक लेती है। बाँदी सितार लाती है।) ला मुझे दे। तू उधर बैठ। नीचे नहीं मेरे सामने बैठ अरे बैठ भी। (हाथ पकड़ कर बैठाती है।) कुछ गा।

बाँदी क्या गाऊँ ?

लाडली कुछ भी गा।

बाँदी एक गजल है अमीर की।

लाडली (चाव से) कौन सी ?

बाँदी चु शमः सोजाँ चु ज़र्रः हैराँ हमेश गिरियाँ ब अश्क आँ मेह।

लाडली (मुँह बिचकाकर) ऊँहुँ। फारसी नहीं। कुछ दिल के करीब हो। ये हिन्द की रात, ये हिन्द का चाँद, सल्तनते हिन्द का शाहजादा और गीत फारसी। कुछ हिन्दी फकीरों की चीजें क्यों नहीं सुनाती। वैसे दिन भर गुनगनाएगी।

बाँदी गऊघाट पर एक अन्धा फकीर रहता था। एक पद सुनाऊँ उसका——

लाडली (सितार छेड़ते हुए) सुना।

बाँदी गाती है

पिया बिन नागिन कारी रात
कबहुँक जामिनि उवज जुन्हैया डसि डलती ह्वै जात।
जन्त्र न फुरत मंत्र नहिं लागत आयु सिरानी जात !

लाडली गीत के बीच ही में उठ कर खड़ी हो जाती है। बाँदी चुप हो जाती है।

लाडली (गहरी साँस लेकर) 'नागिनि कारी रात।' गऊघाट पर रहता है यह फकीर ?

बाँदी अब तो शायद वृन्दावन चला गया है।

लाडली (उठकर टहलती है।) कबहुँक जामिनि उवज जुन्हैया डसि उलटी ह्वै जात। न मालूम कौन सा जज़्बा कब उलट कर आदमी को डसने लगता है। बाँदी क्या यह सच है कि बादशाह सलामत अब भी——

बाँदी (कुछ भय से) जी ?

लाडली कुछ नहीं। माँ कहाँ गयीं। इनसान को क्या हो जाता है ? क्या किसी न किसी उम्र में सभी——

बाँईं ओर से मेहरुन्निसा आती है। धीमे-धीमे। आँखों की आग शांत पड़ गयी है। राख फिर छा गयी है। देखते ही दासी चौकी से उतर जाती है। लाडली दौड़कर लिपट जाती है। मेहर धीरे से अलग कर देती है।

मेहर सीधे बैठो। अब तुम बच्ची नहीं हो।

लाडली (मान से) तो क्या अब मैं बूढ़ी हो गयी हूँ। इतनी-इतनी देर के लिए छोड़ कर चली जाती हो। (मेहर सिर्फ एक सूनी ठंडी

निगाह से उसकी ओर देखती है और लाड़ली जैसे बर्फ में दब जाती है। सहम कर कहती है) माँ क्या हुआ है तुम्हें ?

मेहर कुछ नहीं।

लाडली कुछ तो ? नहीं बताएगी ?

मेहर कुछ नहीं बेटा।

लाडली तो मेरी चोटी गूँथ दो।

मेहर गुँथी तो है।

लाडली ऐसी नहीं। बंगाली ढंग से। जैसी तुम बर्दवान में गूँथती थी।

मेहर बर्दवान की बातें बर्दवान के संग चली गयीं। (कड़े स्वर में) जाओ सोओ।

लाडली तुम भी चलो न ! (मचल कर) माँ !

मेहर तुम जाओ। मैं बादशाह सलामत का इन्तजार कर रही हूँ।

लाडली मुझे नींद नहीं आ रही है। पहेलियाँ नहीं बुझाओगी आज ?

मेहर पहेली तो बूझ रही हूँ बेटा। इस उमर में माँ के लिए बेटी बहुत बड़ी पहेली है।

लाडली (बिना समझे) तो बूझो न ? अच्छा बताओ।

जब काटो तब डहडहे बिन काटे कुम्हिलाय।
ऐसी अद्भुत नार का अन्त न पाया जाय।

नहीं समझीं ! अरे शमा ! गुल न काटो तो टिमटिमाने लगती है ! है न ! अच्छा दूसरी बताओ। यह भी खुसरो की है :—

अजब तरह की है वह नार, वा का क्या मैं करूँ विचार।
दिन वह रहे बदी के संग, लाग रही निसि वाके संग।

बताओ यह तो सभी जानते हैं। परछाईं ! माँ तुम तो कुछ नहीं जानतीं।

मेहर शमा ! परछाईं ! माँ कुछ नहीं जानती। याद पड़ता है कभी कुछ जानती थी माँ। पर माँ सब भूल गयी। लेकिन तू जो है याद दिलाने के लिए। कुरेद देती है रह-रह कर। लाडली ! (सहसा उसका स्वर कड़ा हो जाता है।) इधर आओ। बातों में बहकाओ मत। माँ ने जमाना देखा है। माँ हर दौर मे गुजर चुकी है। समझी।

बाँदी (बात काट कर) हुजूर। जहाँपनाह आ रहे हैं।

बाँई ओर के मेहराबों से जहाँगीर आता है। आगे एक नजाबरदार और पीछे दो पार्श्वक आ रहे हैं। नेजाबरदार खड़ा होकर घोषणा करने के स्वरों में कहता है—"आलीजाह जहाँपनाह" कि सहसा जहाँपनाह उसका कन्धा छू कर संकेत से मना करते हैं। वह अकचका कर चुप हो जाता है। मेहरुन्निसा खड़ी होकर पल्ले से सर ढँक लेती है। लाडली सर झुका लेती है। बाँदी बिना मुड़े पीछे की ओर चलती-चलती जाली की ओर चली जाती है। नेजाबरदार भी इसी तरह लौट जाता है। जहाँगीर आगे आता है। लाडली अभिवादन करती है। जहाँगीर मसनदों वाली चौकी पर बैठ जाता है।

जहाँगीर (स्नेह और आदर से !) खड़ी रह कर मुझे शरमिन्दा न करें। आप बैठें। (लाडली की ओर देखकर) यह मेरी बेटी है।

मेहर (विनम्रता से) यह आपके बन्दे की बेटी है। (गर्व से) यह शेर अफगन की बेटी है। जाओ आराम करो बेटा।

लाडली बिना मुड़े पीछे की ओर चली जाती है। जहाँगीर इशारा करता है और दोनों पार्श्वक आगे बढ़ते हैं। एक के हाथ में जूही के फूलों की थाल है, दूसरे के हाथ में शराब की मीनाकर की हुई सुराही। दोनों सामने रखते हैं।

जहाँगीर आपको कोई एतराज तो नहीं है ? मैं इस वक्त आपके घर में हूँ।

मेहर महल आपके ही हैं। हिन्द आप का है।

जहाँगीर (गहरी साँस लेकर, फीकी हँसी हँसकर) हाँ, लोगों ने तो ऐसा ही मशहूर कर रक्खा है। खैर जाने दीजिए। (थाल में रक्खा हुआ एक जामा उठाकर) इसकी बेल आपने ही काढ़ी है न ? (व्यंग्य से) आपके कसीदे की तो ईरान और रूम में शोहरत हैं। मगर यह आपने क्या किया ? मैंने जूही के फूल काढ़ने को कहे थे।

मेहर तो क्या कुछ गलती हुई ?

जहाँगीर देखें ! (जामा उसके हाथ में देता है) मैं जूही के फूल भी लेता आया हूँ। मुकाबला करें (मेहर बिना फूलों की ओर देखे, कुंठित और अपमानित सी जामे को हाथ में लेकर देखती है। फूलों पर उँगलियाँ रखती है)

जहाँगीर जी, अपनी उँगलियों से नहीं— जूही की कलियों से मुकाबला करें।

मेहर (इस व्यंग्य पर तिलमिला उठती है। बिना फूलों की ओर देखे जामा रख देती है। और बिना जहाँगीर की ओर देखे कहती है।) आप इसकी उजरत न दें।

जहाँगीर (शिरोपेच उतार कर रख देता है) उजरत न दूँ ? मेहरुन्निसा प्यार भूल सकती है। जहाँगीर इन्साफ नहीं भूल सकता। आपने मेहनत की है। उजरत मिलेगी मगर किसी को उमर भर के लिए काँटों में भटकने के लिए छोड़ कर, खुद फूलों की सेज पसन्द करने वाले को फूल और फूल के फर्क की जानकारी तो होनी ही चाहिए। (कुछ फूलों को फेंक कर, पैरों तले मसलते हुए) मगर औरत बेचारी को आदमी और

आदमी के फर्क की तमीज नहीं होती। किस्मत जिसे हाथ पकड़ा दे । (कटु व्यंग्य से) बेचारी बेज़बान औरत ।

मेहर (कुछ गुस्से, कुछ मानसिक चोट से काँपती हुई आवाज में) जहाँपनाह, इतनी रात गए एक लाचार बेवा के हरम में ये बातें करना आपकी शान के खिलाफ है । आपका इन्साफ—

जहाँगीर इन्साफ ! मैं भी इन्साफ चाहता हूँ । शेरअफगन की लाचार बेवा से नहीं मेहरुन्निसा से—

मेहर मेहरुन्निसा मर चुकी है । आज से २० साल पहले वह फूलों में दफन कर दी गई थी । लेकिन उसे मर कर भी चैन नहीं । वह किसी से कुछ नहीं चाहती । सुहाग लुटा उसने उफ न की, राजपाट छोड़कर रखिया बेगम की बाँदी बनी । आँखों की रोशनी ढाल ढाल कर अँगुली का खून गूँथ कर कसीदाकारी की कि किसी तरह अपना और अपनी बेटी का तन ढाँक सके मगर आगरे का इन्साफ-पसन्द शाहंशाह अपनी एक गरीब रियाया तक को इज्जत से गुजर करते हुए नहीं देख पाता ।

जहाँगीर मेहर....... !

मेहर मुझे कह लेने दीजिए जहाँपनाह । मैं जानती हूँ सुबह होने तक मेरा सर उतरवा लिया जायगा । मुझे ! जिससे मुहब्बत का स्वाँग आपने भरा था आज से २० साल पहले, जब आप आवारे और शोहदे नवाबजादों के साथ इश्क की तलाश में घूमते थे और क़व्वालों की महफिल में बैठकर साँप की तरह झूमते थे । उन्हीं दिनों मुझे आपने देखा और दो कबूतर दिये । मुझे याद नहीं, मैं कसम से कहती हूँ कि मुझे याद नहीं कौन कबूतर ? कैसे कबूतर ? क्यों दिये ?

कहाँ दिये आपने ? मगर आपने यह किस्सा मशहूर कर रक्खा है। गरज यह कि उनमें से एक कबूतर उड़ गया और आपको मुझसे मुहब्बत हो गयी। कैसी पुख्ता थी आपकी मुहब्बत की बुनियाद। और कितनी गहरी उतर गयी थीं उसकी जड़ें ? लेकिन शाहंशाह अकबर आप को समझाते थे। वे नहीं चाहते थे कि मैं शराब के प्याले की तरह पीकर फेंक दी जाऊँ। उन्होंने मुझे एक बहादुर और ईमानदार आदमी को सौंप दिया। मगर किस्मत ने मुझसे दुश्मनी ठान ली। मैं आगरे आई और जिस दिन महलों में मैंने कदम रक्खा उसी दिन से.....

जहाँगीर मेहरुन्निसा। मुझ पर गलत इल्जाम न लगाओ। तुम आगरे आईं, मगर सिर्फ इसलिए कि कोई तुम पर उँगली न उठा सके। मैंने कभी इधर कदम भी रक्खा ? पाक इबादत मन्द रखिया बेगम के पास मैंने तुम्हें रक्खा ताकि तुम्हारे जख्मी दिल को राहत मिले। मैंने तुम्हें गुजारा देना चाहा। तुमने कबूल नहीं किया। तुमने सौ बार इस किस्म की बेअदबियाँ कीं। अगर तुम्हारे दिल में मेरे लिए कहीं कोई नर्म जज्बा न होता तो तुम कभी जुरअत न कर सकतीं। अपने दिल की तनहाइयों में तुम बार-बार उस प्रेम कहानी को दोहराती रहीं जो आज से २० साल पहले घटी थी। और फिर भी तुम्हारे मन का एक हिस्सा दूसरे हिस्से से लड़ता रहा और तुमने हर तरह से मेरी ओर से एक सर्द दिली बनाये रखने की कोशिश की और हर बार दिल को धोखा देने की कोशिश करती रहीं।

मेहर लेकिन !

जहाँगीर मुझे भी अपनी बात कह लेने का मौका दो बेगम मेहरुन्निसा !

इस तरह २० साल बाद तुमने आकर फिर मेरे दिल के उस हिस्से को कुरेदना शुरू किया जो मुर्दा पड़ चुका था। २० साल में क्या-क्या नहीं गुजरा। तुम्हें खोया, तुम्हारी ओर से एक सर्द खामोशी मिली। उसके बाद जिन्दगी में वे लोग आये जिन्होंने मुझे प्यार किया, मेरी कमजोरियों के बावजूद मुझे प्यार किया, मेरे मन के घाव भरे। मगर वे लोग भी नहीं रह गए। पहले अनारकली छिनी, फिर खुसरू की माँ ने खुदकशी कर ली। जिसको आदमी प्यार करता है उसको खोकर चाहे चैन पाले, पर जिसने उसे प्यार किया है उसे खोकर आदमी पागल हो जाता है। आदमी में कितनी वफादारी होती है ? लेकिन मैंने किसी तरह अपने को सम्हाला और मुझे सहारा किसने दिया ? तुमने नहीं इसने। (शराब की सुराही उठाकर एक प्याला ढालता है) मैं तुमसे प्यार माँगने नहीं आया था। इन्साफ माँगने आया था मेहरुन्निसा। (मेहरुन्निसा चुप रहती है। जहाँगीर उठकर टहलने लगना है) मुहब्बत (हँसकर) मेरी उमर ढल रही है और २० साल पहले के सपनों की ओर फिर लौट पड़ने वाली यह औरत समझती है कि मेरा प्यार अभी जिन्दा है। काश तुमने वह सब भोगा होता जो मैंने भोगा है तो तुम भी इसी संगमरमर के पत्थर की तरह ठोस और सर्द हो गयी होतीं मगर नहीं शायद औरत ज्यों-ज्यों जिन्दगी भोगती है त्यों-त्यों खोखली होती चलती है। परछाइयों की तरह......

मेहर　　सलीम भाई !

जहाँगीर　　सलीम मर चुका है २० साल पहले जब मेहरुन्निसा मरी थी। मत भूलो शेरअफगन की बेवा जहाँगीर से बात कर रही है, समझीं।

मेहर — समझ रही हूँ। ३५ साल की जिन्दगी में जो कुछ नहीं समझ में आया वह आज इस रात समझ रही हूँ। और जो नहीं समझ पा रही हूँ उसे अब समझना भी नहीं चाहती। लेकिन मुझे अब आगरा छोड़कर चले जाने की इजाजत दें। मैं आप की जिन्दगी से दूर चली जाऊँगी।

जहाँगीर — (हँसकर) जिन्दगी से दूर। कव्वालों के ये फिकरे आप को शोभा नहीं देते बेगम। और इस महल से बाहर आप कदम नहीं रख सकतीं। एक दिन मैंने दिल में सोचा था मैं खुदा पर भरोसा न कर सकूँगा पर आप पर कर सकता हूँ। पर आज एक जहरीली नागिन पर भरोसा कर सकता हूँ। आप पर नहीं। आप के दिल में मेरे लिए कितनी नफरत है इसको भी मैं जानता हूँ। आप मेरे किसी भी दुश्मन से मिल सकती हैं। यह भी जानता हूँ कि जिधर आप होंगी उधर तीर चलाने के लिए मेरे हाथ उठने से इन्कार कर देंगे। सल्तनत बर्बाद हो जायगी। मैंने मुहब्बत बीस साल पहले की थी, सल्तनत आज तक चला रहा हूँ। (हँसकर) आपको महल से बाहर जाने दूँ। आप समझती हैं मैंने आप को मुहब्बत की वजह से महलों में कैद कर रक्खा है। आप को! जिसे वफादारी और मोहब्बत से उतना ही परहेज है जितना मुसलमान को बुतपरस्ती से।

मेहर — तो मैं आप से आँचल फैलाकर भीख माँगती हूँ। मुझे काल कोठरी में डाल दें लेकिन आप माँ-बाप के जज़बात को समझ सकते हैं। जब महल में बेटी की अस्मत तक पर हमला होने लगे।.......

जहाँगीर — आप की बेटी (तलवार पर हाथ रख कर) कौन है वह? आप बताइए। वह मेरी बेटी है।

मेहर — गुस्ताखी माफ हो। शाहजादे परवेज़......

जहाँगीर (जोर से हँस पड़ता है, प्याले पीता जाता है) परवेज। शायरतबा परवेज! हर लड़की से वह प्यार करता है, हर लड़की पर गजलें लिखता है और उसे भूल जाता है। कल शायद वह बिल्कुल भूल ही जाय कि आज क्या हुआ था। लेकिन मैं उसकी हरकतों के लिए उसे सख्त सजा दूँगा। लेकिन मैं उसे जानता हूँ। इन शायरों का प्रेम कितना खोखला, कितना बेमानी होता है। हिन्दुओं की तरह ये हजारहा बुतों को दूर से पूजते हैं और हाथ नहीं लगाते और भूल जाते हैं। (फिर सुराही ढालता है।) लेकिन हम लोग जिनमें शायरी नहीं है, जो अपने जज़बात को सिर्फ महसूस करते हैं जिनके अन्दर ही अन्दर मन में बहुत टूटे-फूटे बेढंगे खंडहर रहते है उनके मन में जब प्यार उतरता है तो बरबाद करके छोड़ता है। आप समझती हैं मैं अब किसी काम के लायक हूँ? सिर्फ इस ताज की जिम्मेदारी है, इस तख्त का तकाजा है; लेकिन कितने गलत हाथों में है यह तख्त, कितने गलत माथे पर है यह ताज। कितनी गलत है मेरी यह पूरी जिन्दगी। जैसे तवारीख की तख्ती पर किसी बच्चे ने गलत इबारत लिख दी हो, और शराब के समुन्दर भी इस गलती को मिटा नहीं पाते। (सर झुका कर बैठ जाता है। थोड़ी देर बाद शराब का प्याला हाथ में लेकर ऊपर शून्य में देखता है।) आप की छत पर आसमान कितना नीला है। आज से बरसों पहले जब खुसरू की माँ ने खुदकुशी की थी, मैं इलाहाबाद में दरिया की रेती पर एक घड़ियाल की खाल खिंचवा रहा था। मौत की खबर पहुँची। उसने अफीम खा ली थी। मैंने कुछ नहीं कहा। चुपचाप

बन्दूक में बारूद की जगह बालू भरता रहा। रेते पर घड़ियाल के खून के थक्के जम कर नीले पड़ गए थे। जमना का पानी भी नीला था और बाद में लोगों ने बताया कि अफीम से उसका गोरा चम्पई बदन भी नीला पड़ गया था। पता नहीं क्यों आज की रात में वही नीला जहर है। यह प्याला उसी नीले जहर के नाम पर जिसने आप पर अपने फन का साया डाल रक्खा था। (फेंक देता है) और यह प्याला किसी के नाम पर नहीं! (पी लेता है) यही असली नशा है। इसका एहसास कि जिन्दगी कितनी बेमानी है और फिर भी कठपुतलों की तरह जीते जाना। (खड़ा हो जाता है : जाते-जाते रुक जाता है) मैं कहता हूँ कि अगर तुम मेहरुन्निसा न होती और २० साल पहले मैंने तुम्हें पूजा न होता तो.... तो आज तुम्हें मैं जबर्दस्ती अपने हरम में डाल लेता और तुम्हें मरोड़ डालता और (गहरी साँस लेकर) और सारा मसला हल हो गया होता, लेकिन बदनसीबी यह है कि कभी मैंने तुम्हें प्यार किया था और (दाँत पीस कर) और आज मैं नफरत करता हूँ...मैं...मैं...मैं

मेहर (सहसा तैश में उठकर, शेरनी की तरह तड़प-तड़प कर) और मैं...और मैं (दाँत पीस कर मेहराबों में खोते हुए बादशाह की ओर देखती है) और मैं...

गला रुँध आता है। सहसा जामा उठाकर उसके चीथड़े-चीथड़े कर डालती है। फिर चौकी पर गिर सी पड़ती है। फूट-फूट कर रो पड़ती है। ठोकर लग कर सुराही लुढ़क पड़ती है। जाकर सितार से टकरा जाती है। सभी तार झनझना उठते हैं। मेहर सिसकती रहती है।

धीरे-धीरे पर्दा गिरता है।

दृश्य २

रात का उत्तरार्द्ध। मोमबत्तियाँ बुझ चुकी हैं। मेहर उसी जगह, उसी मुद्रा में पड़ी रोते-रोते सो गयी है। उसके लम्बे केश पीठ पर बिखरे हैं, कन्धों पर बिखरे हैं। नेपथ्य में लाडली गा रही है।

गोरी सोवे सेज पर मुख पर डारे केस
चल खुसरो घर आपने रैन भई चहुं देस।

जाली के अन्दर से बाँदी चिराग लेकर आती है, अर्द्धालोकित स्टेज पर चौकोर जाली की शतरंजी आलोक छाया सारे संगमरमर पर, सोई हुई मेहर पर पड़ती है, हिलती है, काँपती है, और मिट जाती है। बाँदी चिराग लेकर आती है। सुराही सीधी करती है। सितार उठाकर अलग रखती है। लाडली का गीत चल रहा है—

न नींद नैना, न अंग चैना, न आप आए, न भेजी पतियाँ।
न भेजी पतियाँ, न भेजी पतियाँ, न भेजी पतियाँ, न आप आए!

दासी क्षण भर सोई हुई मेहर की ओर देखती है। फिर उस पर एक शाल डाल देती है। गीत चल रहा है –

खुसरू रैन सुहाग की जागी पी के संग।
तन मेरो मन पीउ को, दोउ भए इक रंग।

मेहर करवट बदल कर शाल को बाँहों में और भी समेट लेती है। दासी अन्दर जाती है। गीत चलता जा रहा है।

न नींद नैना, न अंग चैना, न आप आए न भेजी पतियाँ

मेहर सहसा उठ जाती है, क्षण भर चुपचाप बैठी रहती है फिर आवाज देती है।

'लाडली'

गीत थम जाता है। 'आई माँ' दूर से लाडली का स्वर आता है। मेहरुन्निसा सुराही उठाकर ऊपर रख देती है। थके हुए स्वर में कहती है 'पत्थर कितने ठंडे हो गए।' दूर कहीं पर तीन का गजर बोलता है। बायीं ओर से लाडली आती है।

मेहर (अत्यन्त शान्त स्वरों में) लाडली, सोई नहीं बेटी तुम ?

लाडली सोई थी माँ। नींद ही नहीं आती। मैं तो धीरे-धीरे गा रही थी तुम जाग गईं।

मेहर (एक क्षण अपलक नेत्रों से विचित्र दृष्टि से लाडली को देखती है। चुपचाप। गहरी साँस लेकर) बैठी-बैठी। तुम जूड़ा बाँधने को कह रही थीं। आओ बैठो, बाँध दूँ।

लाडली नहीं रहने दो माँ।

मेहर आओ तो। (दर्पण लाडली के सामने रख देती है, सहसा स्वरों में बहुत स्नेह छलक आता है) मेरे कोई दो चार बेटे-बेटियाँ हैं ? (कुछ देर तक जवाब नहीं देती है। फिर बात टालने के लिये) लाडली एक दिन तू भी इसी तरह अपनी बेटी को गोद में बिठा कर जूड़ा बाँधेगी। उस दिन जानेगी कि सन्तान की ममता कितनी अंधी होती है। मेरी जिन्दगी सिर्फ तुझे देखकर कटती रही है। अभी तू गा रही थी तो मैंने सोचा कि तू ससुराल जायगी तो मेरी जिन्दगी कैसे कटेगी ? यह महल तो मेरे लिये कैदखाना है। फिर काल कोठरी को

चहक-चहक कर गुँजा देने वाली चिड़िया भी उड़ जायगी। (गालों पर एक आँसू ढलक आता है। पल्ले से पोंछ लेती है।)

लाडली मैं कहीं न जाऊँगी माँ। यहीं रहूँगी।

मेहर सभी लड़कियाँ पराई होती हैं बेटा।

लाडली लेकिन....(दर्पण उलट कर रख देती है। कुछ मुड़कर पल्ले का छोर उँगली पर लपेटते हुए) माँ एक बात बताऊँ? मैं जाऊँगी नहीं। यहीं रहूँगी महलों में। अपनी माँ के पास। माँ तुम्हें एक बात बताने वाली थी। बताऊँ माँ?

मेहर (जूड़े में फूल लगाते हुए) मुझे मालूम है बेटा। (गहरी साँस लेकर) मालूम है। लेकिन मैं भी तुझसे एक बात कहूँ? महलों के सपने छोड दे। मैंने इन्हीं छतों के नीचे अपना बचपन बिताया है। इनके सहनों में होने वाली ये चढ़ती उमर की प्यार की बातें सिर्फ शाहजादों की दिलबस्तगी है, और कुछ नहीं। मैंने जिन्दगी देखी है और उसमें प्यार परछाइयों की तरह मिट जाता है बेटा, ये सपने मैंने भी देखे थे। मैंने भी!

लाडली मगर माँ, तुम लड़ीं क्यों नहीं उन सपनों के लिए? तुमने जिन्दगी में उनको एक शक्ल क्यों नहीं दी तुमने? सर क्यों झुका दिया?

मेहर (स्तब्ध हो जाती है, बेटी के इस अप्रत्याशित दुस्साहस पर भौंहों पर बल पड़ जाते हैं। कुछ क्षण चुप रहती है फिर सहसा मुस्करा कर उसका सर प्यार से अपनी गोद में दबा लेती है।) मेरी बेटी कितनी बहादुर है, और कितनी पागल, कितनी नासमझ। मैं किसके लिए लड़ती?

लाडली (दूसरी ओर मुँह फेरकर हिचकिचाहट से) समझ लो माँ। मैं क्या बताऊँ?

मेहर (फीकी हँसी हँसकर) तेरा मतलब बादशाह से है? तो तू भी उन कहानियों में यकीन करती है?

लाडली नहीं माँ! कहानियाँ नहीं—

मेहर कहानियाँ नहीं तो और क्या? मैं उसके लिए लड़ती थी। आज मुझे हर तरह से ज़लील करके गया है। मैं उसके लिए—

लाडली माँ, फूफी कहती थी कि इतनी तीखी नफरत और गुस्सा इस बात का गवाह है कि बादशाह के दिल में अब भी कितना गहरा खिंचाव है—

मेहर (अनसुनी करते हुए) मैं उसके लिए लड़ती जिससे मेरा सुहाग नहीं बर्दाश्त हुआ। जिसने मुझे बेवा बनाकर चैन ली।

लाडली यह झूठा इलजाम है। बादशाह कुछ हों, हत्यारे नहीं हो सकते। जिसने परवेज को पैदा किया हो वह हत्यारा नहीं हो सकता। वे खुद मुझे बता रहे थे कि इसमें बादशाह का कोई दोष नहीं था।

मेहर (कड़े स्वर में) तू अन्धी हो गयी है लड़की।

लाडली मुझे नई निगाहें मिल गयी हैं। जब से (दाँतों से ओठ दबा लेती है) तब से हर चीज अपने नए रूप में दीखने लगी है। जिन्दगी शायद उतनी कुरूप नहीं है माँ। आदमी-आदमी पर शक न करे, विश्वास करे, हमदर्दी रखे, तो चीजों की बिलकुल नई तस्वीर सामने आ जाती है।

मेहर और उस तस्वीर में लड़की अपने माँ-बाप तक को भूल जाती है क्यों?

लाडली नहीं माँ। मुझे क्यों शरमिन्दा करती हो। पर गुजरी बात को लेकर बैठने से क्या? तुमसे गलती हुई तुमने उसे निभाया। अब उसे सुधार सकती हो, सुधार लो।

मेहर (डाँट कर) अपनी हद में रहो लाडली। तुम परवेज से बातें नहीं कर रही हो।

लाडली तुम बेकार नाराज होती हो माँ। अपने को धोखा देती हो और चाहती हो मैं भी उसी तरह अपने को धोखा दूँ। पर नहीं मैंने उन्हें वचन दे दिया है।

मेहर (उठ खड़ी होती है) क्या ?

लाडली हाँ, मैंने उन्हें वचन दे दिया है माँ।

मेहर (एक क्षण स्तब्ध फिर चीख कर) चली जा मेरे सामने से ! मैं कहती हूँ जा यहाँ से।

मारे गुस्से के फूट पड़ती है और सिसक कर रोने लगती है। फर्श पर बैठ कर चौकी पर कुहनियाँ टिका कर रोती रहती है--धीरे-धीरे स्टेज पर अन्धेरा छा जाता है। मेहर को जैसे झपकी सी आ जाती है। जाली के पीछे से नीले रंग का अप्राकृतिक प्रकाश शतरंजी खानों के रूप में स्टेज पर तेजी से नाचता है और धीरे-धीरे मिट जाता है।--धीरे-धीरे अन्धेरे स्टेज पर बादशाह की छाया सी आती है। मेहर को चुपचाप देखकर आगन्तुक धीरे से पास वाली चौकी पर बैठ जाता है। एक गहरी साँस लेकर एक पाँव ऊपर उठा कर घुटने में सिर छिपा लेता है। मेहर की झपकी टूटती है।

मेहर कौन ! सलीम ! (उसकी ओर घूम कर) मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है सलीम ? तुम क्यों मेरी इज्जत खाक में मिला देने पर तुले हो ? मालिक छिन गया, अब बेटी छिनी जा रही है। किस जन्म की दुश्मनी निकाल रहे हो ? किस अभागे क्षण में तुम मेरी जिन्दगी में आये। तुम न आये होते तो मैं कितनी खुश रहती। हर आम लड़की की तरह शादी होती, बूढ़ी होती, बाल-बच्चों से घिरी एक दिन आँख मूँद लेती। मगर

यह हर घड़ी मौत से भी ज्यादा तकलीफ... मुझे अंगारों से क्यों दहका देते हो। मैंने तुम्हारी जिन्दगी बरबाद कर दी तुम मेरा सर उतार लो लेकिन-लेकिन......

आगन्तुक (अपना सर उठाकर मेहर के सर पर हाथ रख देता है ठंडी मुर्दा आवाज में) बहुत तकलीफ है मेहर।

मेहर (सहसा डर से सफेद पड़कर) तुम। (दो कदम पीछे हट जाती है।)

आगन्तुक हाँ बेगम मैं हूँ! शेर अफगन। डरो मत। नुकसान नहीं पहुँचाऊँगा मैं तो सिर्फ माया हूँ। (उठता है एक पैर से लँगड़ाता है। मेहर और पीछे हटती है) मैं तो तुम्हें छू भी नहीं सकता। मैं तो यह भी नहीं चाहता था कि तुम मुझे देखो। मगर झपकी आ गयी। कितनी ठंडी है यह छत। कितना अजब नीला है इसका आसमान। तुम अब भी बाहर ही सोती हो। मैं तो अक्सर आता हूँ। इसी चौकी पर बैठता हूँ। (शेर अफगन बैठ जाता है।) बैठो, बैठो मुझसे बातें करने में डर तो नहीं लगता ? (मेहर सिर हिला कर नहीं करती है) तुम बेकार में यह तकलीफ भोग रही हो। तुम्हें अब तक जहाँगीर की बात कुबूल कर लेनी चाहिए थी। लेकिन वह भी तो अजब आदमी है। तुमसे साफ-साफ बात करने की हिम्मत नहीं। डरपोक है (हँसता है) और उलझा हुआ है खुद को भी नहीं समझता। (फिर हँसता है) बे सिर-पैर की बातें करता है खुद को तकलीफ देता है। जिसे प्यार करता है उसे तकलीफ देता है। (गम्भीर होकर) यह मत समझो कि मैं उससे नफरत करता हूँ, इसलिये बुराई करता हूँ। मुझे मरे तीन साल हो गये। तीन साल में मुर्दे का प्यार क्या और मुर्दे की नफरत क्या (मेहर अपनी

हथेली का पृष्ठ भाग दाँतों से काटती है) न। न। अपना हाथ न काटो। तुम ख्वाब नहीं देख रही हो, पर मैं असलियत भी नहीं हूँ। बैठ जाओ। कोई खडा रहता है तो मैं बात नहीं कर पाता। (मेहर बैठ जाती है) हाँ ऐसे। शादी करने में मैं रुकावट हूँ। पागल हो। (मेहरुन्निसा चुपचाप कातर निगाहों से अफगन को देखती है) तुम समझती हो मैं तुम्हें और समझूँगा। पहले समझ सकता था पर तीन साल से इस धरती को जिन्दगी और मौत की सीमा पार कर बहुत दूर से देख रहा हूँ। धरती और इसके लोग। जैसे बासी-सूखी रोटी पर सैकडों चीटियाँ रेंग रही हों। उनके प्यार, उनकी नफरतें, उनका घमंड, उनकी लड़ाइयाँ, उनकी सल्तनतें सब कितनी छोटी मालूम पड़ती हैं। एक चींटी एक कतार से निकल कर दूसरी में चली गयी। इससे क्या होता है? मेरी इन मुर्दा आँखों में रिश्ते बनना उतना ही बेमानी है जितना रिश्ते टूटना। कुदरत की माँग बिल्कुल दूसरी होती है। कुदरत चाहती है आदमी पीढ़ी दर पीढ़ी अपनी जिन्दगी को संगमरमर के महल के मानिन्द खूबसूरत, ठोस और आरामदेह बनाता चले। इस जिन्दगी में इतना दुख और दर्द आता है कि आदमी उन्हें सहे और ठोस बनता चले। बस इतनी चीज काम की है। इसके अलावा प्यार, नफरत सब परछाइयाँ हैं। तुम क्यों परछाइयों के बीच में भटकती हो। जिन्दगी की असलियत को देखो। तुम उम्र भर मुझे याद करके रोओ या दूसरे दिन जहाँगीर का हरम कुबूल कर लो, मेरे लिये दोनों एक है। बोलो तुम भी तो कुछ बोलो।

मेहर (गला रुँध जाता है) मेरे मालिक। पता नहीं मैं ख्वाब देख रही हूँ। (आँखों में आँसू छलक आते हैं)

शेर अफगन (आँसू की ओर इशारा कर) बस। बस। रोने-धोने के डर से मैं कभी बात नहीं करता था। औरतों की भावुकता से मुझे बहुत डर लगता है।

मेहर कभी जिन्दगी में भी इतनी देर बैठ कर तुमने सुख-दुख की बातें की होतीं ?

शेर अफगन ओ...ह! हर सिपाही की बेगम को यही शिकायत रही है। अब बताओ मैं फौज सम्हालता, इन्तजाम देखता, शेर मारता या तुमसे बैठ कर बातें करता। और फिर सभी तो मेरी जान के गाहक थे। लेकिन इलजाम आया मुफ्त में बेचारे जहाँगीर के सर। अच्छा सच-सच बताओ, मरे हुए आदमी से झूठ नहीं बोलना चाहिए। तुमने सलीम को कभी प्यार नहीं किया ?

मेहर तुमने कभी मुझसे यह सवाल नहीं पूछा वरना तब भी तुमसे झूठ नहीं बोलती। एक उम्र थी जब मैं सलीम के पीछे पागल थी, जैसा एक उम्र में हर लड़की होती है। शादी हुई, आप मिले सब कुछ भूल गयी जैसे सभी औरतें भूल जाती हैं और अब...

शेर अफगन और अब तुम समझ नहीं पातीं कि तुम सलीम को प्यार करती हो या नहीं। जानती हो मरने के बाद आदमी जिन्दगी को एक नक्शे की तरह साफ-साफ समझने लगता है। मैं तुम्हें बताऊँ कि आज उसे प्यार की जरूरत नहीं। उसे हमदर्दी की जरूरत है। उसे एक वजीर की जरूरत है। सिर्फ वह वजीर जरा खूबसूरत होना चाहिए।

मेहर (हँसी दबाती हुई) आपको तो मजाक सूझ रहा है।

शेर अफगन तो क्या हुआ बेगम। मरे हुए आदमी से क्या हँसने का भी हक छीनना चाहती हो ? लेकिन खैर हल्के-फुल्के ढंग से गहरी बातें भी तो कहीं जाती हैं। और फिर जिन्दगी की

कोई भावना, कोई अनुभूति हमेशा के लिये नहीं मरती। पता नहीं कब जिन्दा हो उठती है। जहाँगीर अब भी जिद्दी बच्चा है। जिसको प्यार करता है उससे लड़ता है। तुम उससे बुरा मान जाती हो। मेरी ओर क्या देख रही हो।

मेहर (शर्मा कर) कुछ नहीं।

शेर अफगन कुछ तो ?

मेहर आप की बातों से कितनी राहत मिलती है।

शेर अफगन (हँसकर) मेरी बातें संगमरमर की तरह ठंडी जो हैं। उनमें शायरी नहीं है, सचाई है। और वही तुम्हें समझा रहा हूँ। सलीम के मन की शायरी बीस साल पहले खत्म हो गयी। अब उसकी सच्चाई को क्यों ठुकराती हो ? (किसी की पगध्वनि) कोई आ रहा है। अब मैं चलूँगा।

मेहर जाओगे ? (आगे बढ़कर, भावविह्वल स्वर से) मत जाओ। (हाथ बढ़ाती है)

शेर अफगन छूना मत मुझे। (पीछे हटता है। एक पाँव से लँगडाता है।)

मेहर क्या हुआ ?

शेर अफगन कम्बख्तों ने इसके जोड़-जोड चूर कर दिए। बहुत से थे बेगम। अब तो मुझे उनका नाम भी नहीं याद रहा। अच्छा खुदा हाफ़िज।

लँगड़ाता हुआ मेहराबों में गायब हो जाता है। मेहर एकटक उधर देखती रहती है। फिर सहसा आवेश से उसी चौकी को चूमती है।

मेहराबों में से जहाँगीर आता है। थोड़ी देर दूर खड़ा होकर देखता है। फिर आगे बढ़ता है। फिर मुड़ जाता है।

मेहर (सर उठाकर उसी तरह पड़ी-पड़ी) आओ सलीम।

जहाँगीर लौट कर बैठ जाता है। कुछ कहना चाहता है। फिर चुप हो जाता है। मेहरुन्निसा उठकर बैठ जाती है। बहुत शान्त स्वरों में कहती है 'कहो'!.... जहाँगीर एक क्षण चुपचाप मेहर की ओर देखता है। फिर कुछ बोलना चाहता है। फिर एक गहरी साँस लेता है। उठ खड़ा होता है। मेहर चिरपरिचिता की भाँति उठकर कन्धों पर हाथ रख कर जहाँगीर को बिठा देती है।

जहाँगीर (एक खाली प्याले को अँगुली से नचाता हुआ।) मैं आप से ......तुमसे माफी माँगने आया हूँ। मैंने पता नहीं क्या-क्या कह दिया। पता नहीं क्यों यह सब बातें मैं कह जाता हूँ। मुझे लगता है मैं जो कुछ कहता हूँ उसे खुद समझता हूँ या नहीं। मैं रात भर नहीं सोया हूँ, और सोचता रहा, और मैंने पाया कि मैं आज भी वहीं हूँ, बिल्कुल वहीं जहाँ बीस साल पहले था। सारी जिन्दगी सिर्फ बादलों की तरह आई और ऊपर से बहती हुई चली गयी। और तुम मन में जिस जगह जैसी थीं वैसी ही हो। यकीन करो मेरा गुस्सा तुम पर नहीं अपने पर है। मैं अपने से जब कभी लड़ता हूँ बिना बात के सभी पर कठोर हो उठता हूँ। लेकिन फिर मैंने सोचा कि तुम पर कठोर होने का मुझे क्या हक? तुम्हें इस तरह महलों में कैद करने का भी क्या हक है? तुम जहाँ जाना चाहो आजाद हो। (मेहर कुछ नहीं बोलती।) तुम कहाँ जाओगी?

मेहर दक्खिन।

जहाँगीर ठीक। तुम्हारे सफर का इन्तजाम हो जायगा। लेकिन...... लेकिन (बहुत आजिजी की निगाह से देखकर) एक बार यह कह दो कि तुम माफ करती हो मुझे? मेरे सर पर हाथ

रखकर। (मेहर चुप हो जाती है। जहाँगीर के सर पर हाथ रखती है। जहाँगीर भावविभोर शिशु की तरह उसकी बाहों से सर टेक देता है) अब जाओ। जाओ। (मेहर नहीं हटती, जहाँगीर गहरी साँस लेकर) अब जाओ।

मेहर और न जाऊँ तो।

जहाँगीर नहीं। जाओ तुम।

मेहर (बालों में उँगली फेरते हुए) अब नहीं जाऊँगी। अब कभी नहीं जाऊँगी।

जहाँगीर सच।

मेहर स्वीकृति में सर हिलाती है। कहती कुछ नहीं।

जहाँगीर (मेहर का हाथ माथे से लगाकर) मैं सपना देख रहा हूँ?

मेहर (हाथ हटा कर) नहीं, मैंने तय कर लिया। अब तुम्हें छोड़ कर कहीं नहीं जाऊँगी।

जहाँगीर (क्षण भर स्तब्ध मेहर की ओर देखता है, उसके समझ में नहीं आता। फिर समझ आने पर सहसा उठ खड़ा होता है। और भाव गम्भीर स्वर से कहता है) मैं...... मैं...... मुझे यकीन नहीं होता। सच।

मेहर (जहाँगीर के दोनों हाथ हाथों में लेकर, निगाह नीची कर।) सच।

जहाँगीर (सहसा खुशी से दमक उठता है) मैं....मैं कहता हूँ...चोबदार मीनारों पर शहनाइयाँ बजवा दो। छतों पर केसर छिड़कवा दो। मैं——मैं कहता हूँ तोपें क्यों नहीं दगीं अब तक।

धीरे-धीरे यह कहता हुआ वह मेहराबों में से बाहर चला जाता है और नेपथ्य से उसकी दूरागत आवाज सुन पड़ती है। मेहर एक क्षण स्तब्ध खड़ी रहती है। सहसा शहनाइयाँ बज उठती हैं, वह चौंक जाती

है और धीरे-धीरे पल्ला सम्हालती हुई उसी ओर चली जाती है जिधर जहाँगीर गया है। शहनाइयाँ बहुत तेज हो जाती हैं। दो-तीन क्षण स्टेज खाली नजर आता है। उसके बाद लाडली आँखें मलते हुए आती है। उनींदे स्वर में बाँदी को पुकारती है। फिर चौकी पर बैठ जाती है। शहनाइयाँ चीखने लगती है।

लाडली — पता नहीं क्यों इतनी सुबह शहनाइयाँ चीखने लगीं। नींद बरबाद हो गयी। (जमुहाई लेती है) बाँदी...(कोई उत्तर नहीं आता)

सहसा शहनाइयाँ बन्द हो जाती हैं। दूर कहीं पर सलामी की तोप छूटती है। लाडली और भी व्यग्र होकर उठ खड़ी होती है। सहसा छज्जे से किसी की कमन्द का काँटा आकर अटकता है। लाडली दौड़ कर अन्दर जाती है। इतने में एक दुबला-पतला युवक जो देखने से शाहजादा लगता है, छज्जा लाँघकर सामने आ जाता है। उसका चेहरा तमतमाया हुआ है। भवें तनी हैं। इतने में लाडली तलवार लेकर लौटती है। उसे देखकर रुक जाती है।

लाडली — (खिलकर) ओह शाहजादे हैं। मैं तो घबरा गयी थी। (शाहजादा कुछ जवाब देने को होता है, फिर होंठ चबाने लगता है, चुपचाप इधर-उधर देखता है।) क्यों इतने हैरान क्यों हैं? सलाम तो कुबूल करें।

शाहज़ादा — (सहसा अपने को सम्हालकर) ओह, भूल हुई। मैं भी मल्कए मुअज्ज़मा की शाहजादी को आदाब बजाता हूँ।

लाडली — (हैरान होकर) इसका क्या मतलब?

शाहज़ादा — मतलब? मतलब आप को इन शहनाइयों से नहीं समझ में आता?

लाडली (सोचते हुए) शहनाइयों से ? एक क्षण रुक कर फिर सहसा जैसे कोई तथ्य एकाएक प्रतिभासित हो गया हो) शहनाइयाँ ! अच्छा तो क्या माँ ने...

शाहज़ादा हाँ। ठीक समझी आप। (व्यंग से) समझदार माँ की बेटी जो ठहरीं।

लाडली (अनमुना करते हुये) चलो। आज रात भर मैं माँ से बादशाह के लिये और आप के लिये लड़ती रही। मैंने तो साफ-साफ कहा कि वे अपने को धोखा क्यों देती हैं और आप के लिये तो मुझे बहुत सुनना पड़ा। अब कुछ बख्शीश मिले बन्दी को...

शाहज़ादा (बहुत ठंडे स्वर में) मै सिर्फ अपनी तलवार लेने आया हूँ। भूल से यहाँ छूट गयी थी।

लाडली (लुभाने वाले स्वर में) क्यों ? और मैं अगर वापस न दूँ तो।

शाहज़ादा लाइये।

लाडली नहीं। (छाती से लगाती हुई) आप की तलवार मेरी रक्षा करेगी।

शाहज़ादा आपकी हिफाजत तो मुगल सल्तनत की पूरी फौज करेगी। पर मैं अब शायद इधर रुख करना भी गवारा न करूँ।

लाडली (घबराकर) क्यों ? क्या कुछ कसूर हुआ मुझसे ?

शाहज़ादा आपका क्या कसूर ? आप को तो मैं जानता भी नहीं। मैं बेवा मेहरुन्निसा की लड़की को जानता था। मल्कए मुअज्ज़मा की लड़की से मेरा क्या वास्ता...

लाडली लेकिन...

शाहज़ादा बस रहने दीजिये। माँ-बेटी दोनों एक सी हैं। माँ ने बादशाह पर जाल डाला, बेटी ने शाहज़ादे पर ! सल्तनत की प्यास भी आदमी को कितना ज़लील बना देती है।

लाडली (कुछ तेजी से, कुछ करुणा से) मैं कहती हूँ आप बिल्कुल गलत समझ रहे हैं। मैं जाल डाल रही हूँ ? मैं सिर्फ इतनी हूँ आप के लिये ?

शाहज़ादा इतनी भी नहीं। जो औरते खुदकुशी करके मर जाने वाली खुसरू की माँ का हक छीनने जा रही हो, उसकी बेटी मेरी क्या हो सकती है ? खुसरू मेरा सबसे प्यारा भाई था। मैं उसका बदला लेकर रहूँगा। उसकी माँ की फटी-फटी आँखें मैं आज तक नहीं भूल पाया हूँ। और आज एक फ़ाहशा औरत उसकी जगह...

लाडली (चीखकर) खबरदार जो मेरी माँ के लिये...

शाहज़ादा (और भी तैश में) कहूँगा। सौ बार कहूँगा।

लाडली (तलवार खींचकर) मैं कहती हूँ चले जाओ यहाँ से अभी!

आगे बढ़ती है, शाहज़ादा पीछे हटता है।

शाहज़ादा मैं मरते दम तक देखूँगा कि नई बेगम को चैन न मिले।

लाडली (चीखकर) मैं कहती हूँ चले जाओ वरना...

शाहज़ाद छज्जा लाँघकर पीछे कूद जाता है। अदृश्य हो जाता है। लाडली क्षण भर आग्नेय नेत्रों से उधर देखती है, और फिर पुकार कर कहती है 'ले जाओ अपनी तलवार.... अब कभी इधर कदम रखा तो' और कहते-कहते फूट-फूट कर रो पड़ती है। दाईं ओर से मेहर आती है। पोशाक बदली हुई सी लगती है। मुँह पर ताजापन और और तरुणाई। मेहर को देखते ही झट से आँसू पोंछ कर लाडली मुस्कराने का प्रयास करती है।

मेहर मेरी बेटी। जाग गयी। सोई भी थी देर में। (प्यार से छाती में उसका माथा दुबका कर) तुम नाराज हो बेटी ?

लाडली नहीं तो माँ। मैं बहुत खुश हूँ। (गहरी साँस लेकर) बहुत खुश हूँ। (आँसू छलक आते हैं)

मेहर तो रो क्यों रही है बेटी ?

लाडली (आँसू पोंछ कर) कुछ नहीं माँ। खुशी में, खुशी में, माँ !

मेहर लेकिन बेटा तू मुझे छोड़कर कहीं नहीं जायगी। आगरे में ही रहेगी हमेशा। बोल ?

लाडली (सिसकते हुए) हमेशा माँ। मैं और कहाँ जाऊँगी! किसके पास जाऊँगी माँ ? (फूट कर) मैं किसके पास जाऊँगी माँ ? और कौन है मेरा ?

दोनों गले से लपट कर फूट-फूट कर रो पड़ती हैं। दूर कहीं पर तोप भी छूटती है और शहनाइयाँ भैरवी की गत में गूँज उठती हैं।

धीरे-धीरे सिसकियों के साथ पर्दा गिरता है।

सृष्टि का आखिरी आदमी

रेडियो-छन्द-नाट्य

पात्र

उद्‌घोषक

भीड़ का एक व्यक्ति

शासक

वैज्ञानिक

भीड़

सेना

घटना-काल : अनिश्चित भविष्य

किसी विशेष राजाज्ञा के समय होने वाली तुरही, शंख और नक्कारे की आवाज। पृष्ठभूमि में एक व्यक्ति भारी आवाज से केवल "सुनो ऽऽ ओ सुनो ऽऽ" का अलाप भर रहा है।

उद्घोषक ओ इन्सानो !
ओ मनुराजा की सन्तानो
सुनो ओ सुनो !
बोल रहा हूँ मैं
भविष्य के एक नगर के चौराहे से
बोल रहा हूँ !
यह भविष्य के अन्धकार में छिपी
सभ्यता की नगरी है,
इस नगरी की देहरी तक पग धरते धरते
इतिहासों ने कितनी मंजिल तय कर डाली,
और संस्कृति ने कितनी करवटें बदल लीं।
जिसका नकशा रेगिस्तानों की बालू पर
गरम खून से लिखा गया था;
जिसके शिलान्यास में कितने
नंगे, भूखे, मुर्दा बच्चे दफन हुए थे
तब यह नगरी बस पाई थी।
मैं भविष्य के उसी नगर के चौराहे से
बोल रहा हूँ !

चौराहे पर बहुत से व्यक्तियों का शोर। भय-त्रस्त स्वर, दबी हुई फुसफुसाहट जो कभी-कभी झल्लाहट का रूप ले लेती है। कभी-कभी कोई चीख पड़ता है; छोटे-छोटे बच्चों का क्रन्दन, भिखारियों की आवाजें, गाली गलौज; जो अन्त में उसी फुसफुसाहट में खो जाता है।

आवाजाही, धक्कामुक्की, चीख पुकारें
यह जो सारा शोर आपको सुन पड़ता है,
सच तो यह है नगर डगर में, गली गली में
बहुत भीड़ उमड़ी पड़ती है,
और नगर में तिल धरने को जगह नहीं है;
शोर बहुत बढ़ता जाता है!
जाने क्यों यह सभी लोग हो रहे इकट्ठे
चौराहे पर;
सभी ओर से उमड़ी आती भीड़
हजारों बच्चे-बूढ़े, पुरुष-स्त्रियाँ जल्दी-जल्दी
कदम बढ़ाते चले आ रहे।
लेकिन ये कुछ अजब लोग हैं,
इनके हाथ पाँव छोटे हैं,
माथा धँसा हुआ अन्दर को
पेट बढ़ा है आगे निकला,
माँस लोथड़ों जैसी दो गन्दी सी पलकें झूल रही हैं!
इनकी गति में शान नहीं है।
गन्दे मेढ़क से कीचड़ में
फुदक-फुदक कर चलते हैं ये!
दल के दल ये चले आ रहे

जैसे घृणित प्लेग के चूहे
चले आ रहे हों गलियों में

शीशे के फर्श पर सैकड़ों चूहों की पगध्वनियों की आवाज़।

जाने क्या है आज
भीड़ बढ़ती जाती है !
इनकी बातों से कुछ नहीं समझ में आता
इनकी बोली बदल गई है !
कहते हैं सदियों पहले इन इन्सानों ने
काला गाढ़ा खून पिया था
सड़े हुए मुर्दे खाये थे
तब से इनकी आवाजें ही बदल गई है।

कुछ घुटते हुए और सिसकियों जैसे स्वर में भीड़ की आवाज। उनींदे स्वर में जैसे मंत्र-मुग्ध शव कह रहे हों "कुछ रहस्यमय कलुष अमंगल होने को है।" लगता है यही वाक्य होठ से होठ तक ध्वनि-प्रतिध्वनि की तरह वर्तुलाकार लहरों में फैलता जाता है !

फिर भी जो कुछ सुन पड़ता है
उससे ज्ञात हो रहा है यह
आज नगर में कुछ रहस्यमय कलुष अमंगल होने को है
पिछली रात सितारों से रह रहकर
कुछ ऐसी आवाजें आई थीं ज्यों
कोई जिन्दा व्यक्ति
आग की लपटों में भूना जाता हो !
और रात से झोंकों में
कुछ भुने मांस की बदबू सी है !

सारी रात बिताई लोगों ने
भय-विह्वल, आतंकित मन !
सुबह हुई तो देखा पच्छिम के पहाड़ पर
एक आग का जलता बादल टँगा हुआ है !
झुलस गये हैं जंगल घाटी
चट्टानें तक चिटख गई हैं
जगह जगह पड़ गई सभ्यता में दरार है !
घबराये से लोग घरों से भाग रहे हैं !
चौराहे पर भीड़ जमा है !
कहते हैं यह महासृष्टि का अंतिम दिन है
आज आत्महत्या कर लेगी सारी धरती !
लोग बहुत घबराये से हैं,
भाग रहे हैं ।
भीड़ हो रही है अनियंत्रित !

सहसा भीड़ के स्वर को चीर कर फौजी बैंड बज उठता है और शोर को कुचलता हुआ सैनिक घोड़ों की टापों का स्वर आता है ।

लो आ गई सुसज्जित सेना
जगह जगह बन्दूक हाथ में लिये सिपाही
खड़े हो गये !
लोग सहम कर शान्त हो गये !
लेकिन यह क्या
उधर दूर पर वहाँ मच रही है कुछ गड़बड़ !

'चुप रहो', 'बोलने दो उसे' 'हाँ ! हाँ ! क्या करते हो ? 'मैं कहूँगा मरते दम तक', आदि आवाजें आती हैं, आपस में गुँथ जाती हैं; शोर में तबदील हो जाती हैं

उधर दूर पर वहाँ मच रही है कुछ गड़बड़
कई सिपाही एक व्यक्ति को पकड़ रहे हैं
वह उनके बन्धन में
तड़प तड़प कर कुछ कहता है
दो सिपाहियों ने उसकी बाहें पकड़ी हैं
एक हाथ से बन्द कर रहा है उसका मुँह
लेकिन वह भी बिना कहे चुप नहीं हो रहा है
वह देखो अब सुन पड़ता है :—

इस व्यक्ति का स्वर सुनो भाइयो !
हम भी चूहे, तुम भी चूहे
और सिपाही भी चूहे हैं !
गो कि हाथ में उनके बन्दूकें हैं, लेकिन
ये बन्दूकों वाले चूहे भी हैं केवल खेल खिलौने
रंग-बिरंगी वर्दी वाले
नहीं आग के बादल से ये जीत सकेंगे

सैनिक कवायद की ध्वनि, बिगुल की आवाज, बादल की गरज।

मार भले लें हमको, लेकिन
महानाश के तूफानों में
ये भी पीले पत्तों जैसे झर जायेंगे
आज सृष्टि का अन्तिम दिन है
आज सिमट कर आस्मान हम पर टूटेगा
सारी रात सितारों में मरघट सुलगा है
तुम्हें दे रहा हूँ चितावनी
मैंने रात चन्द्रमा पर देखे हैं
लाल खून के धब्बे !

आज चाँदनी के संग संग लोहू बरसेगा
यम के अजगर मुँह फाड़ेंगे, साँसें लेंगे
चूहे हैं ! हम चूहे हैं ! मर जायेंगे

भीड़ गमगीन स्वरों में दोहराती है--"हम चूहे हैं मर जायेंगे ! हम चूहे हैं मर जायेंगे।" पहले निराशा, दुख और कसक भरे स्वरों में कुछ लोग गाते हैं फिर और लोग भी स्वर मिला देते हैं। पहले निराशा, अवसाद और मृत्यु से पराजय के पश्चात्ताप का स्वर, फिर अवसाद दृढ़ता में बदल जाता है जैसे चूहे होना और मरना ही उनका भाग्य और उनका जीवन-दर्शन है। पर फिर भी एक घबराहट स्वरों में पछाड़ खा रही है। सहसा भीड़ की आवाज को चीर कर उसी व्यक्ति का स्वर आता है। लाचारी और नपुंसक गुस्से का स्वर---"हम चूहे हैं मर जायेंगे।"

गोलियों की धाँय धाँय। उसके बाद खामोशी, मरघट का सा सन्नाटा।

उद्घोषक खत्म हो गया !
उसे सैनिकों की गोली ने भून दिया है।
काली काली सड़क खून से लाल हो गई
उसकी लाश पड़ी है अब तक !
भीड़ महज खामोश खड़ी है,
कई भयातुर बच्चे केवल सिसक रहे हैं।
भीड़ महज खामोश खड़ी है !
पच्छिम के पहाड़ पर छाये हुए
आग के जलते बादल में
कुछ काली-काली लहरें दौड़ रही हैं।
दूर घाटियों में

अन्धी विषभरी हवाएँ
साँय साँय करती चलती हैं
भीड़ महज खामोश खड़ी है।

सैनिकों का मार्च, बैंड पर शाही गत बजने लगती है।

भीड़ फिर गाने लगती है—"वह चूहा था मर गया और हम चूहे हैं मर जायेंगे!"

सैनिक बाँध रहे हैं पाँतें
भीड़ रास्ता छोड़ रही है
सुनते हैं अब खुद शासक आने वाला है!

भीड़ का स्वर तेज होता जाता है। "हम चूहे हैं मर जायेंगे, हम चूहे हैं क्यों चूहे हैं क्यों चूहे हैं?"

तुरही और नक्कारे की आवाज।

लो खुद नगरी का शासक दौड़ा आया है।
चौराहे के बीचोबीच खड़ा होकर
कुछ बोल रहा है!
सैनिक संगीनों से घेरा डाल रहे हैं।
भीड़ और भी बेकाबू होती जाती है
यह शासक का ऊँचा स्वर है।

शासक शर्म करो! शर्म करो!
मेरी नगरी के रहने वालो!
आखिर इतनी घबराहट क्यों।
महज चूँकि तारों में मरघट जले रात भर।
या कि पच्छिमी पर्वत पर
यह जलता बादल टँगा हुआ है!
ओ कम्बख्तो! भूल गये तुम,

मैंने अपने राज्य-काल में
सोने से मढ़ दीं दीवारें
धरती पर फौलादी चादर चढ़ी हुई है
नदियों पर भी मीलों लम्बे बाँध बँधे हैं
फिर मेरे इस प्रजातन्त्र में
बिना वोट के नहीं फूल तक खिलता है जब,
क्या मजाल है
बिना वोट के यहाँ कयामत झाँक सके तो !
लेकिन फिर भी मैं इस बादल को
गोली की बौछारों से
अभी बुझा देने का हुक्म दे रहा हूँ !
सेनापति ! ...

भीड़ में शोर गुल । फायरिंग । एक के बाद कई राउन्ड ।

उद्घोषक सैनिक आसमान पर गोली चला रहे हैं
लेकिन महाकाल की प्यासी जीभ सरीखा
बादल धीरे-धीरे बढ़ता ही जाता है ।

बादल की गरज ।

कोई दूर पहाड़ी पर से धीरे-धीरे उतर रहा है ।
लम्बी दाढ़ी, ढीला चोगा, तीखी आँखें !
कहते हैं वह वैज्ञानिक है, जादूगर है, युगद्रष्टा है ।
उसने सात पीढ़ियाँ देखी हैं अपनी बूढ़ी आँखों से ।
भीड़ उसे रास्ता दे रही,
राजा तक उसके आदर में खड़ा हो गया !

दो सेकण्ड तक खामोशी ।

धीरे धीरे, बढ़ता बढ़ता
वह उस शव तक पहुँच गया है
पड़ा हुआ जो बीच सड़क पर !

दो सेकण्ड तक खामोशी ।

झुका हुआ है वह उस शव पर !

क्रूर अट्टहास

उसे देख कर हँसता है वह !
कैसी है खूंखार हँसी यह
कैसी है खूंखार हँसी यह !
शासक के चेहरे पर है छा गई सियाही
घब ा कर...लो वह क्या बोला—

शासक बन्द करो यह हँसी
बन्द करो यह...
बन्द करो...
बन्द...

वैज्ञानिक (हँसते-हँसते) आखिर आज प्रलय का पहला अक्षर
तुमने लिख ही डाला !
मैंने अपनी इन आँखों से
सात पीढ़ियाँ बनते और बिगड़ते देखीं
और सुना था
जिस दिन पच्छिम के पहाड़ पर लपटों का बादल छायेगा,
और सड़क पर एक लाश करवट बदलेगी,
उस दिन इस नगरी का अन्तिम क्षण आयेगा ।
ओ इस अन्तिम क्षण तक जिन्दा रहने वालो
आज तुम्हारे साथ खत्म हो जायेगी यह

एक सृष्टि की, एक सभ्यता की गन्दी बेशर्म कहानी !
यह सोने के महलों में रहने वाले
चूहों की संस्कृति
आज ध्वस्त होने वाली है ।

शासक बन्द करो यह राजद्रोह !

वैज्ञानिक ...यह द्रोह नहीं है !
तुमने खुद यह मौत बुला ली है अपने पर
देखो अभी करवटें लेगा यह नंगा लावारिस मुर्दा,
और पहाड़ों को चूमेगा ।
यह बादल, यह नदियाँ, यह कठोर चट्टानें
इसका शासन मानेंगी
यह मुर्दा
पहला शुभ्र चिन्ह है महाप्रलय का !

शासक सेनापति...

वैज्ञानिक कहने दो मुझको

शासक सेनापति ! बन्दूकें...

वैज्ञानिक इन बन्दूकों से तुम कब तक
अपनी किस्मत को टालोगे ?
यह बन्दूकें मैंनें ही खोजी थीं जिनसे
आज स्वयम् मेरी आवाज दबाते हो तुम !

शासक सेनापति !
इस पागल की कुछ दवा चाहिये !

(फायरिंग)

वैज्ञानिक आ ऽऽ !

भीड़ का शोरगुल । वैज्ञानिक की घायल कराह ! भीड़ का फुसफुसाता हुआ स्वर:—

हम चूहे हैं मर जायेंगे।
यह जादूगर चूहों का है,
यह राजा भी चूहों का है
यह मुर्दा भी चूहों का है
हम चूहे हैं, मर जायेंगे।

वैज्ञानिक मेरा गला घोट दो चाहे,
लेकिन कैसे रोक सकोगे
उस भविष्य के बढ़े कदम को
यह बादल तो बरसेगा ही
मुर्दे अपना बदला लेंगे

पुनः फायरिंग।

आधी भीड़ मुर्दे अपना बदला लेंगे!
आधी भीड़ हम चूहे हैं मर जायेंगे!

धीरे-धीरे दोनों आवाजें आपस में गुंथने लगती हैं। बादल की गरज—बिजली गिरने की तड़प।

उद्घोषक वैज्ञानिक की लाश उठा कर
पागल जनता भाग रही है!
गरज रहा है वह लपटों का खूनी बादल
सचमुच, सचमुच करवट बदल रहा है मुर्दा
यह क्या वह तो खड़ा हो गया
उसकी पलकें डोल रही हैं,
उसके काले सूखे होंठ हिल रहे हैं कुछ
यह क्या वह तो बोल रहा है!

मुर्दा भागो मत! भागो मत!
तुम कब तक भागोगे?

तुमने खुद मौत बुलाई है, स्वीकार करो
तुम उस नगरी के वासी हो
जिसकी नीवों में छोटे छोटे बच्चों की खोपड़ियाँ हैं।
तुम उस नगरी के वासी हो
जिसमें भूखे गीदड़ नारी की लाशों के संग सोते हैं।
तुम उस नगरी के वासी हो
जिसमें सपने, हत्या से हथकड़ियों से तोले जाते हैं।
तुम उस नगरी के वासी हो
तुम उस नगरी के
उस नगरी के
उस नगरी के
वासी हो
भागो मत, भागो मत
तुम कब तक भागोगे ?
यह मौत तुम्हारी इमारतों की
ईंट ईंट से फूटेगी
यह मौत धरा से उबलेगी
यह मौत गगन से टूटेगी।
यह मौत बुलाई है तुमने
स्वीकार करो।
भागो मत भागो मत !
तुम कब तक भागोगे ?

शासक (भयत्रस्त स्वरों में) सेनापति......

सेनाओं के एलर्ट होने की आवाज ! फायरिंग।

मुर्दा यह बन्दूकें यह सेनाएँ

कुछ काम नहीं देंगी मुझ पर
मैं मृत्युलोक से लौटा हूँ
मृत्युंजित हूँ।
मेरे माध्यम से कोई और बोलता है
मैं धरती की, जनता की
प्रभु की वाणी हूँ!
जिसके सीने पर तुमने युद्ध रचाये थे
ये भवन बसाये थे जिसके कंकालों पर!
अब तक मैं चुप था,
बोल रहे थे तुम
अब मैं बोलूँगा, मेरी बारी है।
अब तक तुम आगे बढ़ते थे
मैं जंजीरों में बँधा घसिटता था पीछे,
अब मेरे कदम उठे हैं
धरती काँपेगी!
अब मेरी बेला आई है।
मैं बदला लूँगा
ध्वस्त करूँगा यह नगरी
इसकी गलियों में पिघली हुई
आग की नदियाँ उबलेंगी।

जनता के भागने के स्वर।

भागो मत!
कब तक भागोगे!
धरती के हर टुकड़े के नीचे

कोई लाश इसी मौके के इन्तजार में लेटी है।
वह कदम तुम्हारे जकड़
चूस लेगी तुमको !
तुम जिनको युग से कुचल-कुचल चलते आये
वे अब धरती को फोड़ सतह पर आयेंगे !
यह ज्वालामुखी पहाड़
युगों से नफरत सीने में दाबे
खामोश खड़ा है।
लेकिन अब यह धधकेगा
खूँखार दानवों की लोलुप जिह्वा जैसी
अनगिन लपटें
इस नगरी को खा जायेंगी !
मुर्दे अपना बदला लेंगे

आधी भीड़ मुर्दे अपना बदला लेंगे !

आधी भीड़ हम चूहे हैं मर जायेंगे !

भीड़ के भागने के शोरगुल पर यह दोनों आवाजें भूखी चीलों के मानिन्द मंडराती हैं और आपस में गुँथ जाती हैं।

उद्घोषक भाग रही है भीड़ !
नगर में हाहाकार मच रहा है !
वह मुर्दा स्वयम् हाथ से घावों को दाबे
फौलादी छाया सा
डगमग बढ़ता जाता है पच्छिम को !
वह जिधर-जिधर जाता है भगदड़ मचती है
सड़कों पर सन्नाटा छाता,
गरज रहा है रह-रह कर लपटों का बादल !

वह धीरे पच्छिम के पर्वत पर चढ़ता जाता है !
लोग अभी तक भाग रहे हैं !
लेकिन कोई राह नहीं है
गलियों से गलियों में दौड़ रहे हैं जैसे
भूल भुलैयों में पागल कुत्ते भटकें !
वह पहुँच गया है पर्वत के उच्चतम शिखर पर
एक बार आग्नेय दृष्टि से
देख नगर की ओर, देख कह रहा है पर्वत से :—
कितनी सदियों से तुम
नगरी के सिरहाने चुपचाप खड़े हो !
जैसे मरने वाले के सिरहाने यम के मृत्युदूत
अपने मौके की ताक देखते हों गुपचुप !
वह मृत्युपर्व अब आया है !
इन्सान गली-कूचों में पागल कुत्तों जैसा रोता है,
चन्द्रमा खून के छींटों से मुँह धोता है !
तुम भी अपना बदला ले लो !
अनगिन भट्टियाँ नरक की कबसे धधक रही हैं सीने में
कितना जहरीला धुआँ युगों से घुटता है !
बस एक पर्त पत्थर की उस पर जमा हुई है
जिससे अब तक महाध्वंस बचता आया है ।
आज चूम कर उस पत्थर को गला रहा हूँ !
धधको ओ भूखे ज्वालामुखि,
अपनी गहन गुफाओं में बन्दी
जहरीले अग्निदानवों को कर दो उन्मुक्त !
धधकती उल्काओं से
जो धरती का जर्रा जर्रा झुलसा डालें, पिघला डालें !

चूम रहा हूँ मैं अपने मुर्दा होठों से काला पत्थर
धधको ओ भूखे ज्वालामुखि !
ओ भूखे ज्वालामुखि !
धधको, धधको, धधको, धधको,

हजारों कंठों का 'धधको धधको' का शबरमंत्र की भाँति पाठ।

दो क्षण बिल्कुल खामोशी।

सहसा गड़गड़ाहट और भयानक विस्फोट। धरती के चिटखने, तूफानों के पागल घोड़ों जैसे दौड़ने, इमारतों के ढहने का भयानक शोर। उसी में भागदौड़, चीख-पुकार, मार्मिक करुण रोदन। लगता है जैसे नरक के निम्नतम कुंड में से यह शोर उबल पड़ता है। धीरे धीरे हजारों बिल्लियों की रोने की आवाज। फिर शोर दूर चला जाता है और अन्त में एक अव्यक्त सिसकी मात्र।

उद्घोषक नष्ट हो गया !
सब कुछ आखिर नष्ट हो गया।
लाखों बरसों से,
कण कण तृण तृण पर जो निर्माण हुआ था
नष्ट हो गया !

गरज गरज कर बरस रहा है
महानाश का जलता बादल !
पिछली हुई आग की नदियाँ
नगर डगर को निगल रही हैं।
छोटे छोटे, बच्चे बूढ़े,
तरुण औरतें, झुलस रही हैं
भुने मांस की तीखी कड़वी वदबू से सर घूम रहा है।

कड़ुआ काला धुआँ
झुलसते हुए नगर की
अंतिम चीख़ पुकारों का दम घोंट रहा है।
लाशें सड़े हुए कीचड़ में तैर रही हैं।
यह पिघले सीने की कीचड़ !
हँसता है वह
पर्वत की चोटी पर खड़ा हुआ हँसता है !
दोनों हाथों से नगरी पर
पिछली आग उलीच रहा है !
महानाश के वज्रों को वह
उठा उठा कर फेंक रहा है
आग उसे न जला पाती है,
हवा उसे न डिगा पाती है,
चट्टानें उससे टकरा कर टूट रही हैं ।
वह ज़िन्दा विद्रोह
तरल नफरत से पागल
मृत्युंजित वह
आत्म-तुष्टि से वह हँसता है !
उसकी पलकों पर परतें जम गईं राख की !
पिछली हुई आग की कीचड़ में घुटनों तक
धँसा हुआ है।
लेकिन उसके माथे पर उल्लास फूल सा खिला हुआ है !
इस घाटी से उस घाटी पर
राजमहल से चौराहे तक
गलियों से गलियों में
डगमग घूम रहा है

सड़ी घिनौनी लाशों पर
चलता फिरता वह घूम रहा है !

धीरे-धीरे शोरगुल, क्रन्दन समाप्त। क्षण भर सन्नाटा। केवल उसके भारी पावों की धमक।

अब कोई जि़न्दा नहीं बचा
सारी नगरी लाक्षागृह जैसी पिघल गई !
अब फैली फैली धरती पर
कोई भी जिन्दा हस्ती साँस न लेती है।
इस मुर्दे ने सम्पूर्ण सभ्यता को चुटकी में मसल दिया।
बस एक हवा का पागल झोंका
भटक रहा है गलियों में
संस्कृति की उखड़ी साँसों सा !
एक आग की और खून की महानदी
सिर धुनती, लाशों को झुलसाती
आगे बढ़ती जाती है !

नदी की भयानक घर-घर और उसमें घुली-मिली सियारों के रोने की आवाज।

अब धरती पर इन्सान नहीं पैदा होगा !
वह शर्मनाक इतिहास न अब दोहरायेगा !
इस धरती की गोद सदा के लिये
आग से झुलस गई
यह बाँझ धरा
कुछ दिन में अब
मुर्दा ग्रह सी, बिल्कुल ठंडी पड़ जायेगी।

सियारों का रोदन एकाएक थम जाता है।

लेकिन यह क्या ?
यहाँ खेत की पगडण्डी के पास रुक गया वह,
कुछ झुक कर देख रहा है,
अभी आग की नदी यहाँ न पहुँच पाई है !
देख रहा है क्या वह ?
एक बाल गेहूँ की लम्बी, दुबली, पतली
मृदुल धूप की चुनरी ओढ़े झूम रही है।
और पास में एक जंगली फूल खिला है।
मुर्दे की वह
राख सनी भूरी सी पलकें आर्द्र हो गईं
उस गेहूँ की तरुण बाल को
आशीर्वादों की निगाह से देख रहा है।
लो उसने तो बदल दिया रुख
हाथ उठा कर
पिघली हुई आग की जलती महानदी से
कहता है कुछ।

मुर्दा — ठहरो !
ओ ज्वालामुखि अपना बंद करो मुख!
धरती के सीने में जहाँ छिपी थी नफरत,
वहीं सृजन का एक बीज यह छिपा हुआ था।
जो प्रलयंकर तूफानों से नहीं डरा
जो चट्टानों की पर्तें तोड़ कर उठ आया है।
यह भविष्य की नई सृष्टि का प्रथम चिन्ह है,
इसे प्रणाम करो ओ आग उगलते सूरज !
रक्त-स्नात ओ चाँद !
आग की महानदी ओ ! इसे प्रणाम करो !

इस गेहूँ के लघु दाने में
एक नई सभ्यता छिपी है शरमाई सी !
इसमें बसी हुई हैं नव गंधर्व-नगरियाँ,
इसमें एक नया दर्शन साँसें लेता है।
नई कल्पना, गीत नया, इन्सान नया,
इस गेहूँ की हरी बाल की
शीतल छाया में पनपेगा !
एक सभ्यता मिटा चुका मैं,
इस गेहूँ की और फूल की तरल छाँव में
एक नई संस्कृति का अब निर्माण करूँगा।

नदी की घर घर दुगुनी हो जाती है। सियार फिर रोने लगते हैं।

उद्घोषक लेकिन यह क्या ?
पिघली हुई नदी आगे बढ़ती जाती है
भूखे साँपों जैसी लाखों जीभ पसारे
पिघली हुई आग आगे बढ़ती जाती है !
तन कर खड़ा हो गया वह
ललकार रहा है !

मुर्दा नहीं सुनोगे !
मैं कहता हूँ, ठहरो ओ बहरे ज्वालामुखि !
ओ अन्धे तूफान आग के
अपने कदम न आगे धरना !
खत्म हुआ अब नाश, नया निर्माण हो रहा।
नहीं रुकोगे ?
मैं मृत्युंजित हूँ,
तुम मुझे न खा पाओगे !

ओ नफरत के काले दानव !
तुमसे भी मैं हाथ आजमा लूँगा हँस कर !
ठहरो, ठहरो, ओ नफ़रत की पिघली ताकत
ओ लपटों की सूनी आँधी !
यह गेहूँ की बाल
जंगली फूल
नई दुनिया के पहले चिन्ह अनोखे
इन पर अगर आँच आई तो
चाँद सितारों को धरती पर बिखरा दूँगा !

नदी की घर्घराहट और समीप आती है।

उद्घोषक लेकिन आग नहीं रुकती है।
महानदी, भूखी दानवी सरीखी
अपने केश बिखेरे
सौ सौ तूफानों के बल से बढ़ती जाती
पहुँच गई लो उसी जगह तक !
उसने गेहूँ की बाली को
बाँहें फैला घेर लिया है।
वह सीने पर उन लहरों को झेल रहा है
खड़ा गले तक दफन आग में, तरल आग में
कदम उखड़ते हैं पर
तनी हुई लोहे सी देह
और माथे पर नई सृष्टि का सपना।

धीरे-धीरे नदी का शोर घटता है। एक बहुत सुकुमार संगीत गूँजने लगता है और दूर कहीं पर पूजा वेला की घंटियाँ बजने लगती हैं।

पिघली हुई आग की बाढ़
घट रही है अब,
इन्द्रधनुष दो चार उतर आये हैं
उन पर, ज्योतिवृत्त से !
पिघली हुई आग की बाढ़ घट रही है अब !
निर्निमेष पलकों से जाने
किस भविष्य की
नई सृष्टि को देख रहा है।
किसी नये मानव का सपना
जो इस गेहूँ की शीतल छाया में
फूलों सा पनपेगा !

नदी का शोर कतई बन्द। घुँघरू की आवाज़ और फिर बिल्कुल नीरवता।

बाढ़ खत्म !
धरती फिर ऊपर उभर रही है
एक स्वर्ग-संगीत
घाटियों में घुँघरू सा नाच रहा है !
जिसकी लय पर एक नया इन्सान ढलेगा !
जिसकी लय पर ही,
जीवन के सभी मूल्य फिर से बदलेंगे
जिसकी लय पर
होठों पर चुम्बन आयेंगे
पलकों में आँसू छायेंगे
जिसकी लय पर एक नई सभ्यता अवतरित होगी फिर से !
जिसकी लय पर,

अब प्रशांत ज्वालामुखि के पीछे से
झाँक रहा है
नई सृष्टि का पहला सूरज,
खिले गुलाबों सी जिसकी रतनारी आभा
ध्वस्त सृष्टि को फिर से आलोकित करती है।
टूटे-फूटे खण्डहर खिले गुलाब सरीखे सुन्दर लगते
यह आखिरी मनुष्य सृष्टि का,
नई सृष्टि का मनु बन कर आगे बढ़ता है!
यह धरती की नई परत है
मैं भविष्य के और बाद आने वाले
भविष्य के क्षण में,
बोल रहा हूँ!
ओ मनु राजा की सन्तानो!
सुनो! ओ सुनो!
बोल रहा हूँ
नई सृष्टि का
उद्घोषक मैं!

तूर्य-नाद, शंखध्वनि, मंगलवादन और किसी नवजात शिशु की प्रथम मुस्कान का सहज, सुन्दर, सरल संगीत!